म० म० पं० श्रीगङ्गाधरशास्त्री तैलङ्ग विरचिता

भारत-कथा

(बालतोषिणी संस्कृत-हिन्दी-व्याख्या सहिता)



पं० श्रीजगन्नाथ शास्त्री तैलङ्ग

वाराणसेय-संस्कृत-विश्वविद्यालयीय-प्रथमपरीक्षायां निर्धारिता

भारत कथा

●

'बालतोषिणी' नामक-संस्कृत-हिन्दी-व्याख्योपेता

●

लेखकः

म० म० स्व० श्री गङ्गाधर शास्त्री तैलंगः

सी० आई० ई०

●

व्याख्याकारः

श्री जगन्नाथ शास्त्री तैलंगः

साहित्याचार्यः

●

भूमिका-लेखकः

श्री कान्तानाथ शास्त्री तैलंगः

[रीडर हिन्दूविश्वविद्यालय, वाराणसी]

प्रकाशकः

मोतीलाल बनारसीदास, वाराणसी

समर्पणम्

पूज्यपितृव्यचरणेषु

'त्वदीयं' वस्तु गोविन्द तुभ्यमेव समर्पये ।'

प्रेष्ठो विनीतो

—जगन्नाथः



महामहोपाध्याय श्री ६ गङ्गाधर शास्त्री, सी० आई० ई०, काशी ।

जन्म-संवत् १९१० मृत्यु-संवत् १९७०

दो शब्द

परमादरणीय वाग्देवतावतार हमारे पूज्य पितृव्यचरण म० म० स्व० गङ्गाधर शास्त्री तैलंग सी० आई० ई० महोदय की 'शाश्वत' धर्मदीपिका का यह 'भारत-कथा' अंश वाराणसेय संस्कृत विश्वविद्यालय की प्रथमा परीक्षा में पाठ्य-ग्रन्थ के रूप में निर्धारित हुआ है। इसके प्रकाशन का उपक्रम करते हुए प्रसिद्ध प्राच्यविद्या-प्रकाशन-प्रतिष्ठान श्री 'मोतीलाल बनारसीदास' ने मुझे इसकी व्याख्या करने के लिए कहा। तदनुसार बालकों के पाठ्य ग्रन्थ को ध्यान में रखकर मैं भी बालमति उसे लिखकर विज्ञ जनों के समक्ष उपस्थित कर रहा हूँ। इसमें टीका करने के अभिनिवेश का भाव न होकर पूज्य चरणों की वाणी से अपनी लेखनी को पवित्र करने का भाव ही सर्व-प्रमुख है। उसके बाद का प्रेरक भाव कोमलमति बालकों को सहयोग देना है। यह कहाँ तक बन पड़ा, यह विद्वान् पाठक ही तय करेंगे। पूज्य कान्तानाथ शास्त्री तैलंग जी ने इसे अपनी भूमिका से सुशोभित कर मुझे और भी उत्साह दिया है। उनके प्रति सश्रद्ध कृतज्ञता व्यक्त करते हुए प्रकाशक को भी इसके प्रकाशन के लिए अनेक धन्यवाद दे रहा हूँ।

—जगन्नाथ शास्त्री तैलंग

भूमिका

'भारत-कथा' स्वर्गीय पूज्यपाद परमगुरु श्री महामहोपाध्याय पं० मानवल्लि गङ्गाधर शास्त्री जी तैलंग की रचना है। श्री पूज्यचरण अपने समय के सर्वश्रेष्ठ विद्वानों में अन्यतम थे। आपका आविर्भाव-काल और जीवन-वृत्त आदि निम्नलिखित हैं।

कवि का संक्षिप्त जीवन : वृत्त—बंगलोर के 'यसरगट्टा' नामक गाँव में 'मानवल्लि' उपनामक गौतमगोत्रीय एक वैदिक कुटुम्ब रहता था। इस वंश में श्री मानवल्लि सुब्रह्मण्य शास्त्री नामक विद्वान् का आविर्भाव हुआ। आप कृष्णयजुर्वेद की तैत्तिरीय शाखा के घनान्ती विद्वान् तथा संस्कृत साहित्य और वेदान्त के अच्छे पण्डित थे। आपके एकमात्र पुत्र मानवल्लि नृसिंह शास्त्री थे। नृसिंह शास्त्री के बाल्यकाल ही में उनके माता-पिता का स्वर्गवास हो गया। अतः वे बंगलोर में अपने मामा के घर रहने लगे। वहीं आपकी प्रारम्भिक शिक्षा हुई। आप अठारह वर्ष की अवस्था तक कृष्णयजुर्वेद की तैत्तिरीय शाखा तथा साहित्य शास्त्र के पूर्ण पण्डित हो गये। इसके बाद आपके मन में श्री काशी विश्वनाथ का दर्शन करने की प्रबल इच्छा का उदय हुआ। परन्तु उन दिनों आज की तरह यात्रा के साधनों की सुविधा न थी। अतः महीनों कष्टपूर्ण यात्रा कर आप पैदल काशी आये और भगवान् विश्वनाथ का दर्शन कर कृतकृत्य हुए।

आपने काशी में ही वेदान्त और मीमांसा-दर्शनों का विधिवत् अध्ययन किया। यहींसे आपका गृहस्थाश्रम भी प्रारम्भ हुआ। आपकी वैदिक-प्रौढ़ता, दार्शनिक-विवेचकता और साहित्य-निपुणता से प्रसन्न हो

तात्कालिक काशीनरेश महाराज श्री ईश्वरीनारायण सिंहजी ने आपको बड़े सम्मान से अपने दरबार का प्रधान पण्डित पद प्रदान किया। महाराज श्री ईश्वरीनारायण सिंह जी की छत्रच्छाया में रहकर आपने बहुत-सी रचनाएँ कीं, जिनमें महाराज के निर्देश पर विरचित 'साहित्य-सागर' नामक पद्यमय विशाल हिन्दी-ग्रन्थ विशेष उल्लेखनीय है। इसके अतिरिक्त आपने स्कन्दपुराणान्तर्गत 'शिवविलास' खण्ड की संस्कृत-टीका, महाभारत के कतिपय पर्वों की हिन्दी-टीका तथा 'काव्यात्म-संशोधन' नामक साहित्यशास्त्र के सैद्धान्तिक ग्रन्थ की रचना की है। आप अध्यापन कला में भी बड़े निपुण थे।

आपको भगवान् की कृपा से ज्येष्ठ शुक्ल दशमी (गंगादशहरा) वि० सं० १९१० में पुत्र-रत्न की प्राप्ति हुई। यही पुत्र आगे चलकर म० म० पं० गङ्गाधर शास्त्री जी तैलङ्ग सी० आई० ई० के नाम से प्रसिद्ध हुए। नामकरण संस्कार के अवसर पर आपका नाम 'सुब्रह्मण्य' रखा गया था, किन्तु बाद आपकी मातामही के आग्रह पर, गंगादशहरा को जन्म होने के कारण, व्यावहारिक नाम 'गङ्गाधर' ही चल पड़ा।

श्री नृसिंह शास्त्री जी ने शिशु गङ्गाधर को पाँच वर्ष की अवस्था से ही काव्यों की शिक्षा देना आरम्भ किया। आठ वर्ष की अवस्था तक गङ्गाधर जी की काव्यों में अच्छी गति हो गयी। वे संस्कृत, हिन्दी, मराठी और तेलगू में अच्छी तरह पढ़ने लिखने लग गये। इसी समय शास्त्री जी ने उनका यज्ञोपवीत संस्कार कर उन्हें वेदाध्ययन का अधिकारी बना दिया। वेदाध्ययन के लिए वे वेदमूर्ति श्री बालकृष्ण भट्ट नेने के पास जाने लगे। साहित्य, व्याकरण और दर्शन का अध्ययन वे घर पर ही अपने पिता जी से करते थे। सोलह वर्ष की अवस्था तक श्री गङ्गाधर जी ने कृष्णयजुर्वेद की तैत्तिरीय शाखा का साङ्ग अध्ययन कर लिया। साहित्य के वे पूर्ण पण्डित हो गये। दर्शन और व्याकरण का भी उन्हें अच्छा ज्ञान प्राप्त हो गया।

अब नृसिंह शास्त्री जी ने उन्हें व्याकरण के उच्चग्रन्थ तथा धर्मशास्त्र का अध्ययन करने के लिए श्री राजाराम शास्त्री जी कार्लेकर को सौंप दिया, दर्शनशास्त्र स्वयं ही घर पर पढ़ाने लगे। दुर्भाग्यवश श्री राजाराम शास्त्री जी का कुछ ही समय बाद देहावसान हो गया। तब श्री गङ्गाधर जी ने श्री राजाराम शास्त्री जी के प्रधान शिष्य श्री बालशास्त्री जी रानडे से, जिन्हें लोग उनकी विद्वत्ता के कारण 'बाल-सरस्वती' भी कहते थे, व्याकरण और अन्य शास्त्रों का अध्ययन आरम्भ किया। श्री गङ्गाधर जी बड़े प्रतिभाशाली थे। वे गुरुमुख से एक बार जो व्याख्यान सुन लेते, सदा के लिए उनके हृदय में स्थायी हो जाता। शास्त्रीय वाक्यों के अर्थ करने में नये-नये परिष्कार उन्हें स्वयं सूझने लगते। गुरुदेव इनसे सर्वदा बड़े प्रसन्न रहते। गुरु की कृपा से इन्होंने थोड़े ही समय में व्याकरण, धर्मशास्त्र तथा अन्य शास्त्रों का भी पूर्ण पाण्डित्य सम्पादन कर लिया। श्री बालशास्त्री जी ने प्रसन्न होकर अपने छात्रों के अध्यापन और धर्मशास्त्रसम्बन्धी व्यवस्था देने का कार्य श्री गङ्गाधर शास्त्री जी को सौंप दिया। आपने भी इस भार को बड़ी दक्षता से संभाला।

अब श्री गंगाधर शास्त्री जी का यश चारों तरफ फैलने लगा। काशिक राजकीय संस्कृत महाविद्यालय के तत्कालीन प्रिन्सिपल श्री थीबो साहब ने श्री शास्त्री जी से साहित्य और दर्शन के अध्यापक का पद स्वीकार करने की प्रार्थना की। सं० १८७९ ई० में आप वहाँ प्राध्यापक हो गये। आपकी अध्यापन-कला उत्कृष्ट थी। छात्र-मण्डली आकृष्ट होकर चारों तरफ से आपकी शरण आने लगी। आपने व्याकरण, साहित्य-धर्मशास्त्र और दर्शन में अनेक दिग्गज विद्वान् तैयार किये। आपके पढ़ाये विद्वानों में म० म० श्री रामशास्त्री जी तैलंग, म० म० श्री लक्ष्मण शास्त्री जी तैलंग, गवर्नमेण्ट संस्कृत कालेज, बनारस के तत्कालीन प्रिंसिपल डाक्टर वेनिस आचार्य श्री दामोदरलाल जी गोस्वामी, म० म० श्री रामावतार शर्मा जी, म०म० श्री नित्यानन्द पर्वतीय जी, तथा श्री नागेश्वर पन्त धर्माधिकारी

जी आदि विद्वानों के नाम उल्लेखनीय हैं। सन् १८७७ में श्रीमती सम्राज्ञी विक्टोरिया के जीवन के ५० वर्ष पूरे हुए। उस समय सरकार की ओर से धूमधाम से स्वर्ण-जयन्ती महोत्सव मनाया गया। इसी महोत्सव के के अवसर पर सरकार की ओर से श्री गंगाधर शास्त्री जी की 'महामहोपाध्याय' की उपाधि से विभूषित किया गया। इस समय आपकी अवस्था केवल तैंतीस वर्ष की थी। इसके बाद सन् १९०३ में सप्तम एडवर्ड अंग्रेजी साम्राज्य के सम्राट् हुए। उस अवसर पर दिल्ली में दरबार-महोत्सव मनाया गया। सरकार की ओर से श्री शास्त्री जी को भी दिल्ली आकर उत्सव में सम्मिलित होने के लिए आमन्त्रित किया गया। परन्तु स्वास्थ्य ठीक न होने के कारण आप दिल्ली न जा सके। अतः सम्राट् की तरफ से काशी के जिलाधीश ने आपको सी० आई० ई० की पदवी दी जाने की घोषणा दी। आप दीर्घकाल तक प्रयाग-विश्वविद्यालय की कार्यकारिणी समिति के सदस्य रहे।

कतिपय रोचक संस्मरण : महापुरुषों के जीवन की कुछ घटनाएँ ऐसी होती हैं, जिनसे नयी पीढ़ी के लोगों को शिक्षा मिलती है और कार्यक्षेत्र में उनका उत्साह बढ़ता है। श्री गंगाधर शास्त्री जी के जीवन की भी ऐसी ही कतिपय प्रमुख घटनाओं का यहाँ उल्लेख करना अप्रासङ्गिक न होगा।

एक समय की बात है, श्री गट्टूलाल शास्त्री नामक एक शतावधानी विद्वान् काशी आये। वे थे तो जन्मान्ध, पर साहित्य और अन्य शास्त्रों के अनुपम विद्वान् रहे। शास्त्रचर्चा के लिए श्री गोपाल-मन्दिर के प्राङ्गण में काशी के विद्वानों की एक सभा हुई। बहुत देर तक गूढ़ शास्त्रीय विषयों पर विचार हुआ। अन्त में प्रज्ञाचक्षु शास्त्री जी ने कहा : 'यदि कोई मेरी वर्णक्रमानुसारिणी 'बभौ मयूरो लवशेषसिंहः' इस समस्या को वर्ण-क्रमानुसार ही पूर्ण कर दे तो मैं पराजय स्वीकार कर लूँगा।' यह सुन उपस्थित विद्वानों के चेहरों पर उदासी छा गयी। सभी लोग श्री गंगाध

शास्त्री जी की ओर देखने लगे। श्री शास्त्रीजी ने नम्रता से कागज और लेखनी उठायी और निम्नलिखित प्रकार से समस्या पूरी कर कागज श्री गट्टूलाल जी के सामने रख दिया :

'अनेकवर्णक्रमरीतियुक्तः कस्यागघाङच्छजझाञटौठः।

ञडणढणस्तोऽथ दधौ न पम्फुल् बभौ मयूरो लवशेषसिंहः॥

सभा-भवन 'जितम्, जितम्' के नारों से गूँज उठा। श्री गट्टूलालजी और विद्वानों ने श्री गंगाधर शास्त्री जी को गले लगाकर अपनी विद्यानुरागिता का परिचय दिया।

सन् १८९० में सरकारी अधिकारियों ने काशी में जल-कल-व्यवस्था चालू करने का निर्णय किया। अस्सीघाट स्थित श्री गोस्वामी तुलसीदास जी द्वारा स्थापित राम मन्दिर का स्थान-परिवर्तन करने तथा मूर्तियों को दूसरे मन्दिर में पुनः स्थापित करने का विचार हुआ। इस समाचार से जनता क्षुब्ध हो उठी। अधिकारियों ने दमन-नीति का आश्रय लिया। इससे आग शान्त होने की अपेक्षा और बढ़ने लगी। अतः उस समय के जिलाधीश ने श्री शास्त्री जी से इस विषय पर शास्त्रीय व्यवस्था देने की प्रार्थना की। श्री शास्त्रीजी ने अपनी व्यवस्था दी और अधिकारियों को मूर्तियाँ हटाने और मन्दिर तोड़ने से मना किया। अधिकारियों को अपनी योजना त्यागनी पड़ी। इस प्रकार श्री शास्त्री जी ने अपने प्रभाव से काशी नगरी को भारी उपद्रव से बचा लिया। जनता और अधिकारियों के सिर आनेवाली भारी आपत्ति टल गयी।

श्री गङ्गाधर शास्त्री जी जिस प्रकार साहित्य, व्याकरण, दर्शन, धर्मशास्त्र आदि विषयों के मर्मज्ञ विद्वान् थे, उसी प्रकार वेद और श्रौत-स्मार्त कर्मकाण्ड के भी अद्वितीय पण्डित थे। सन् १८९७ ई० में काशीनिवासी एक निर्धन ब्राह्मण श्री सदाशिव दीक्षित, अग्निहोत्री ने श्री शास्त्री जी से 'ज्योतिष्टोम' यज्ञ करने की अभिलाषा व्यक्त की। उन्होंने श्री शास्त्री जी से ही उस यज्ञ का आचार्यत्व स्वीकार करने की प्रार्थना

की। श्री सदाशिव जी निर्धन थे। श्री शास्त्री जी के पास भी इतना धन न था कि वे उस यज्ञ का पूरा भार वहन करते। फिर भी उन्होंने उस यज्ञ का आचार्यत्व स्वीकार किया और यज्ञ करने का निश्चय किया। आपके आगे होते ही चारो तरफ से धन बरसने लगा और आपने उसको यथाविधि संपन्न किया।

इसके कुछ दिनों बाद नेपाल महाराज के राजपण्डित आचार्य श्री शिरोमणि जी ने दो 'सोमयाग' किये। दोनों में आपने श्री शास्त्री जी से ही आचार्यत्व ग्रहण करने की प्रार्थना की। शास्त्री जी ने बड़ी प्रसन्नता से उनकी प्रार्थना स्वीकार की और दोनों याग बड़ी सफलता से संपन्न किये। ये याग कई सौ वर्षों से नहीं हुए थे। अतः उनकी विधि संपन्न कराने वाले याज्ञिक दुष्प्राप्य थे। श्री शास्त्री जी ने स्वयं ब्राह्मण ग्रन्थ, श्रौतसूत्र आदि का आलोडनकर पद्धतियाँ तैयार की और अध्वर्यु, होता आदि ऋत्विजों को शिक्षित किया। दोनों यज्ञ बड़े समारोह से संपन्न हुए।

पूज्य शास्त्री जी को दो पुत्र और एक कन्या थी। आपके ज्येष्ठ पुत्र का नाम श्री दुण्ढिराज शास्त्री और कनिष्ठ पुत्र का नाम श्री भालचन्द्र शास्त्री था। श्री दुण्ढि राज शास्त्री बड़े प्रतिभाशाली थे। दुर्भाग्यवश सन् १९०३ ई० में आपका एका-एक देहावसान हो गया। पूज्य शास्त्री जी के कनिष्ठ पुत्र श्री भालचन्द्र शास्त्री जी भी साहित्य के अप्रतिम विद्वान् थे। आप काशिक राजकीय संस्कृत महाविद्यालय में प्रधानाध्यापक थे। आपके पढ़ाये अनेक छात्र आज भी शिक्षा-विभाग में उच्च पदों पर काम कर रहे हैं।

ज्येष्ठ पुत्र श्री दुण्ढिराज शास्त्री-जी के देहावसान के बाद श्री गङ्गाधर शास्त्री जी धीरे-धीरे क्षीण होने लगे। आपने राजकीय सेवा से अवकाश ग्रहण किया। ज्येष्ठ शुक्ल प्रति-पद् गुरुवार वि० सं० १९७० को आपने इहलीला पूरी कर महाप्रयाण किया।

पूज्य श्री गङ्गाधर शास्त्री जी को म० म० श्री रामशास्त्री जी तथा म०म० श्री लक्ष्मण शास्त्री जी दो छोटे भाई थे। श्री रामशास्त्री जी साहित्य और दर्शन के उत्तम कोटि के विद्वान् थे। आप काशिक राजकीय संस्कृत महाविद्यालय में प्रधानाध्यापक थे। आपकी प्रकाशित-अप्रकाशित अनेक उत्तम रचनाएँ हैं। श्री लक्ष्मण शास्त्री जी सबसे छोटे भाई थे। आप भी साहित्य के अनुपम विद्वान् थे। आप क्वीन्स कालेज, वाराणसी में संस्कृत के प्राध्यापक थे। आपकी भी प्रकाशित और अप्रकाशित अनेक रचनाएँ उपलब्ध हैं।

म० म० श्री लक्ष्मण शास्त्री जी के एकमात्र पुत्र श्री जगन्नाथ शास्त्री जी इस वंश के रत्न हैं। आप भी साहित्य के अच्छे पण्डित हैं और अपने वंश की परंपरा के अनुसार संस्कृत में उत्तम कविता करते हैं। आप धनधान्येश्वर संस्कृत विद्यालय में प्रधानाध्यापक हैं। पूज्य पितृव्य चरणों की भारत-कथा की प्रस्तुत 'बालतोषिणी' व्याख्या आपने ही की है। आपको चि० सुब्रह्मण्य, नृसिंह और चि० लक्ष्मण तीन पुत्र-रत्न हैं। विद्वज्जनों के आशीर्वाद से तीनों बालक दीर्घायु एवं अपने वंश की प्रतिष्ठा में चार चाँद लगानेवाले हों, यह ईश्वर से प्रार्थना है।

शास्त्री जी की रचनाएँ—श्री शास्त्री जी की अनेक रचनाएँ उपलब्ध हैं। आपने संस्कृत में गद्य और पद्य में अनेक रचनाएँ है आपकी रचनाएँ (१) मौलिक ग्रन्थ और (२) टीका-टिप्पणी दो भागों में विभक्त की जा सकती हैं। मौलिक रचनाओं में 'सूक्ति प्रपा', 'श्रीराजारामशास्त्रिणां जीवनवृत्तम्', 'श्रीबालशास्त्रिणां जीवनवृत्तम्', 'अलि-विला सिसंलापः', 'हंसष्टिकम्' और शाश्वताधर्मदीपिका' प्रसिद्ध हैं जहाँ तक टीका-टिप्पणियों का सम्बन्ध है, पदमंजरी, रसगंगाधर, वाक्यपदीय, तन्त्रवार्तिक, सिद्धान्तलेश, जयन्तवृत्ति, न्यायवार्तिक, तत्त्वबिन्दु आदि ग्रन्थों पर आपकी पाण्डित्यपूर्ण टिप्पणियाँ मिलती हैं। इनके अतिरिक्त आपकी कई रचनाएँ अप्रकाशित पड़ी हैं।

भारत-कथा : एक परिचय—'भारत-कथा' श्री शास्त्री जी द्वारा रचित 'शाश्वत-धर्मदीपिका' का एक अंश है जो छात्रों के हितार्थ पृथक् रूप से प्रकाशित किया जा रहा है। यह वाराणसेय संस्कृत विश्वविद्यालय की प्रथम परीक्षा में पाठ्य-ग्रंथ के रूप में निर्धारित है। प्रस्तुत काव्य की रचना का उद्देश्य श्री शास्त्री जी ने स्वयं दो श्लोकों में स्पष्ट कर दिया है। वे लिखते हैं :

बालानां भारतकथाबोधार्थं मङ्गलाय च।
धर्माचारेण कल्याणप्राप्ते ऽदृष्टान्तदित्सया ॥
बहुत्र भारतीयानां विषयाणां निबन्धनात्।
इह सम्बन्धबोधार्थं संक्षेपेणोच्यते कथा ॥

बालकों को महाभारत की कथा का ज्ञान कराने और जीवन को मंगल-मय बनाने के लिए तथा धर्माचरण से कल्याण-प्राप्ति के दृष्टान्त रूप में यह काव्य रचा गया है। महाभारत की कथा के अंशों का अनेक ग्रंथों में उल्लेख है। उनका परस्पर सम्बन्ध-बोध कराना भी इस काव्य का एक उद्देश्य है। हमारे विचार से यह प्रारम्भिक वर्ग के छात्रों को संस्कृत भाषा का ज्ञान कराने के लिए अतीव उपयुक्त है।

संक्षिप्त कथानक: कुरुवंश में पाण्डु नाम के एक राजा थे। मुनि के शापवश राज्य त्याग कर वे वन गये। उनकी दो पत्नियाँ कुन्ती और माद्री भी उनके साथ हो लीं। राजा पांडु को पुत्र न था। उनकी बड़ी रानी कुन्ती ने मन्त्रों से धर्मराज, पवनदेव और इन्द्र का आवाहन किया। उनसे उसने क्रमशः युधिष्ठिर, भीम और अर्जुन ये तीन पुत्र प्राप्त किये। छोटी रानी माद्री को अश्विनीकुमारों से नकुल और सहदेव ये दो पुत्र मिले। पुत्रों के बचपन में ही एक दिन राजा पांडु ने काम के वशीभूत हो माद्री का आलिंगन किया और मुनि के शाप के कारण वे दिवंगत हुए। माद्री ने भी पाण्डु के दिवंगत होने पर अपने प्राण त्याग दिये। आश्रमवासी मुनि-जन कुन्ती और उसके पांचों पुत्रों को हस्तिनापुर ले आये।

हस्तिनापुर में चाचा धृतराष्ट्र उनका पालन-पोषण करने लगे। धृतराष्ट्र के दुर्योधन आदि सौ पुत्र-धीरे-धीरे पांडवों से शत्रुता करने लगे। भीष्मपितामह ने इन्हें धनुर्वेद की शिक्षा देने के लिए कृपाचार्य को नियुक्त किया। कुछ दिनों बाद उन्होंने पाण्डवों को धनुर्वेद की उच्चशिक्षा के लिए द्रोणाचार्य को सौंपा। धनुर्विद्या की पूरी शिक्षा देने के बाद द्रोणाचार्य ने इनसे राजा द्रुपद को जीतने के लिए कहा। अर्जुन ने द्रुपद को पराजित किया।

कर्ण दुर्योधन का घनिष्ट मित्र था। शकुनि उसका मामा था। वह पाण्डवों से जलता था। एक बार दुर्योधन ने भीम को विष देकर तथा सर्पों से कटवाकर नदी में फेंकवा दिया। वह बहता हुआ वासुकी नाग के घर पहुँचा। वहाँ उसने अमृत-पान किया। उससे उसकी शक्ति सौ हाथियों की-सी हो गयी। इसे देख दुर्योधन आदि बड़े दुःखी हुए।

दुर्योधन आदि कौरवों ने पांडवों को मरवा डालने के लिए धृतराष्ट्र को उसकाया। उसने उनको वारणावत भेज दिया। जाते समय चाचा विदुर ने पाण्डवों को गुप्त भाषा में बतलाया कि उनके लिए पुरोचन से लाह का घर बनवाया गया है। यह जान युधिष्ठिर सतर्क हो गये। एक दिन भीम ने रात में उस घर में आग लगा दी। पाण्डव और कुन्ती विदुर द्वारा बताये सुरङ्ग से निकलकर वन में चले गये। वहाँ सोये हुए भाइयों की रक्षा करते समय भीम का रात में हिडिम्ब नामक राक्षस से युद्ध हुआ। भीम ने उसे मारकर उसकी बहन हिडिम्बा से विवाह किया। उससे घटोत्कच नाम का एक पुत्र हुआ।

इसके बाद पाण्डव माता के साथ एकचक्रा नामक नगरी में गये। वहाँ वे कुछ समय ब्राह्मण के वेष में एक ब्राह्मण के घर छिपे रहे। एक दिन कुन्ती ने ब्राह्मण को रोते देख उसके दुःख का कारण पूछा। उसने उत्तर दिया कि 'इस गाँव के पास बक नाम का एक राक्षस रहता है। गाँव के लोग रोज एक मनुष्य को उसके भोजन के लिए उसके पास भेजते

हैं। आज मेरे पुत्र की बारी है। मुझे एक ही पुत्र है। अतः मैं शोक-सागर में डूब रहा हूँ।।' कुन्ती को दया आयी। उसने कहा : 'आज मेरा पुत्र जायगा।' उस ब्राह्मण के अस्वीकार करने पर कुन्ती ने उससे कहा : 'मुझे पाँच पुत्र हैं। उनमें से दूसरे को मन्त्रसिद्धि है। वह बक को मार डालेगा। तुम यह बात गुप्त रखना।' इस पर ब्राह्मण प्रसन्न हुआ। कुन्ती ने भीम से बक को मारकर बालक की रक्षा करने को कहा। जब यह बात युधिष्ठिर को मालूम हुई तो उन्होंने कुन्ती को मना किया। इस पर कुन्ती ने उनसे कहा : 'ब्राह्मण की रक्षा करना धर्म है। तुम मत डरो। भीम बक को मार कर लौट आयेगा।' उसने भीम को प्रेरित किया। भीम ने वन जाकर नगरी के उत्पीड़क बक को मार डाला।

उसी नगरी में रहते हुए पाण्डवों ने सुना कि राजा द्रुपद के यहाँ कन्या का विवाह है। सर्वश्रेष्ठ पराक्रमी पुरुष को कन्या दी जायगी। यह सुनकर पाण्डव धौम्य ऋषि के साथ द्रुपद के नगर गये। वहाँ वे एक कुम्हार के घर ठहरे। वहाँ नाना देशों से हजारों राजा आये थे। दुर्योधन, कृष्ण आदि भी स्वयंवर देखने आये। स्वयंवर की सभा में राजा द्रुपद के पुत्र धृष्टद्युम्न ने राजाओं से कहा : 'जो पुरुष इस धनुष पर प्रत्यञ्चा चढ़ा बाणों से लक्ष्य को बेधेगा, उससे मेरी बहन का विवाह होगा।' राजा लोग एक-एक कर उठे, किन्तु कोई धनुष को झुका न सका। तब कर्ण उठा। उसे देख धृष्टद्युम्न ने कहा : 'तुम सूत हो। हमारा तुमसे सम्बन्ध नहीं हो सकता। इसके बाद ब्रह्मवृन्द के बीच से ब्राह्मणवेषधारी अर्जुन उठा। उसने धनुष पर प्रत्यञ्चा चढ़ा लक्ष्य बेधा और द्रौपदी को प्राप्त किया। जब दुर्योधन आदि लड़ने के लिए खड़े हुए, तो उसने भीम की सहायता से उन्हे मार भगाया।

अर्जुन द्रौपदी को घर ले आया और उसे कुन्ती के सामने खड़ाकर दिया। कुन्ती ने कहा : 'तुम पाँचों इसका उपभोग करो' पाण्डव विचार करने लगे कि एक स्त्री के पाँच पति कैसे हो सकते हैं? इसी समय

भगवान् वेदव्यास वहाँ आ पहुँचे। उन्होंने कहा 'कि द्रौपदी का पाँचों पाण्डवों से विवाह हो सकता है। भगवान् शंकर का वरदान है। इसमें किसी प्रकार के दोष की शंका की आवश्यकता नहीं।' यह सुनकर द्रुपद ने द्रौपदी का पाँचों पाण्डवों से विवाह कर दिया। धृतराष्ट्र ने भी उनको इन्द्रप्रस्थ में राज्य दिया। वहाँ महामुनि नारद आये। उन्होंने उन्हें सुन्द-उपसुन्द की कथा सुनाकर कहा कि 'कहीं तुम लोगों में भी उसी प्रकार झगड़ा न हो।' इस पर पाण्डवों ने प्रतिज्ञा की कि 'जिसका वर्ष होगा, उसे द्रौपदी के साथ रमण करते यदि कोई दूसरा देख ले, तो वह एक वर्ष व्रत करेगा।' यह सुनकर नारद जी प्रसन्न हुए और स्वर्ग लौट गये।

एक दिन अर्जुन ने युधिष्ठिर को द्रौपदी के साथ देख लिया। इस पर अपनी प्रतिज्ञा के अनुसार वह वन जाने के लिए तैयार हुआ। प्रेम के कारण उसे वन भेजने में युधिष्ठिर आगा-पीछा करने लगे। अर्जुन ने बड़ी कठिनाई से उनकी आज्ञा प्राप्त की। उसने वन जाकर चोल तनया उलूपी से विवाह किया और श्रीकृष्ण की बहन सुभद्रा का बलपूर्वक हरण भी किया। आगे चलकर उसे सुभद्रा से अभिमन्यु नामक पुत्र हुआ। युधिष्ठिर आदि अन्य भाइयों को भी दौपदी से पुत्र हुए।

एक बार अर्जुन जल-विहार के लिए श्रीकृष्ण के साथ यमुना-तट गया। वहाँ उसने एक तपस्वी को देखा। तपस्वी ने अर्जुन से भोजन माँगा। उसने भोजन देने की प्रतिज्ञा की। इसके बाद अर्जुन ने उससे उसका नाम पूछा। उसने कहा : 'मैं अग्निदेव हूँ, खाडव वन चाहता हूँ। परन्तु इस वन में तक्षक रहता है। वह इन्द्र का मित्र है। उसके प्रेम से इन्द्र खाण्डव वन की रक्षा करते हैं। अतः मैं तुम्हारी सहायता चाहता हूँ।' यह कहते हुए अग्नि ने अर्जुन को गाण्डीव धनुष, दो अक्षय तरकश और दिव्य कपिध्वज रथ दिया। अर्जुन अत्यन्त प्रसन्न हुआ। उसने अग्नि से

कहा : 'अब तुम निःशङ्क खाण्डव वन जलाओ। मैं इन्द्र को देख लूँगा।'

जब अग्नि खाण्डव जलाने लगा तो इन्द्र ने तक्षक की रक्षा के लिए वन पर जोरों से वर्षा की। अर्जुन ने बाणों का छाता बना वृष्टि का निवारण किया। तक्षक तो वन में आग लगते ही कुरुक्षेत्र भाग गया, पर उसकी स्त्री और पुत्र वहीं रह गये। उसके पुत्र ने अग्नि से वन को बचाने का बहुत प्रयत्न किया, परन्तु वह असफल रहा। तब पुत्र को बचाने के लिए तक्षक की स्त्री ने उसे निगल लिया और वहाँ से भागने लगी। अर्जुन ने उसे बाण से छेद कर गिरा दिया।

इसी समय इन्द्र ने जोर की वर्षा और आँधी से अर्जुन को व्याकुल कर दिया। अवसर पाकर तक्षक का पुत्र माँ के पेट से निकल कर भाग गया। अर्जुन को क्रोध आया। उसने देवताओं-सहित इन्द्र को परास्त किया। इतने में आकाश-वाणी हुई। अशरीरिणी वाणी ने इन्द्र से कहा। 'तुम्हारा मित्र तक्षक बचकर कुरुक्षेत्र भाग गया है। लड़ाई बन्द कर स्वर्ग जाओ। तुम अर्जुन और कृष्ण को हरा नहीं सकते। ये नर-नारायण हैं।' इस पर इन्द्र देवताओं-सहित स्वर्ग चले गये।

इधर अग्नि कृष्ण और अर्जुन के बल पर खाण्डव को यथेच्छ जलाने लगा। मय दानव भी खाण्डव में रहता था। वह प्राण बचाने के लिए अर्जुन की शरण आया। अर्जुन ने उसे बचा लिया। अग्नि भी खाण्डव-दाह से प्रसन्न हो कृष्ण और अर्जुन को आशीर्वाद दे चला गया। मय ने प्रसन्न हो अर्जुन से कहा : 'बताओ तुम्हारे लिए क्या करूँ।' उसने उसे कृष्ण के पास भेज दिया। कृष्ण के कहने से मय ने युधिष्ठिर के लिए खाण्डव-भूमि पर एक मणिमय सभा-भवन बना दिया।

देवर्षि नारद ने युधिष्ठिर को इसी सभा-भवन में राजसूय यज्ञ करने की सलाह दी। युधिष्ठिर ने कृष्ण से मन्त्रणा कर भीम और अर्जुन को जरासन्ध के वध के लिए मगध देश भेजा। उन्होंने स्नातक-वेष में वहाँ जाकर

जरासन्ध से युद्ध की भिक्षा माँगी। भीम ने युद्ध में जरासन्ध को मार डाला और उसके लड़के को राजा बनवाया।

इसके बाद युधिष्ठिर ने चारों भाइयों को दिग्विजय के लिए भेजा। उन्होंने सभी राजाओं को जीत सामन्त बना लिया। अब राजसूय यज्ञ आरंभ हुआ। यज्ञ के अन्त में युधिष्ठिर ने भीष्म की अनुमति से कृष्ण का अग्र-पूजन किया। इस पर शिशुपाल हँसा और कृष्ण को गालियाँ देने लगा। कृष्ण ने चक्र से उसका सिर उड़ा दिया।

दुर्योधन पाण्डवों की मणिमयी सभा देख रहा था। एक स्थान पर जल देख उसे सूखी भूमि का भ्रम हुआ। ज्यों ही वह आगे बढ़ा, फिसलकर पानी में गिर पड़ा। द्रौपदी को हँसी आ गयी। मानी दुर्योधन को बड़ा दुःख हुआ। उसने आत्महत्या करने का विचार किया। इसी समय वहाँ उसका मामा शकुनि आया। उसने उसे आत्महत्या करने से रोका और द्यूत में युधिष्ठिर का सारा धन हरण कर लेने की सलाह दी।

दुर्योधन ने पिता से मन्त्रणा कर युधिष्ठिर को छल से द्यूत के लिए बुलाया। शकुनि ने द्यूत में उसका सारा धन हर लिया। राज्य हार जाने पर युधिष्ठिर ने क्रमशः भाइयों, द्रौपदी और अपने को भी बाजी पर लगा दिया। शकुनि ने इन्हें भी जीत लिया। इसके बाद दुःशासन दुर्योधन की आज्ञा से द्रौपदी को राजोधर्म की अवस्था में ही सभा में ले आया। उसने वहाँ उसका वस्त्र-हरण करने का प्रयत्न किया। जब द्रौपदी ने देखा कि कोई सभासद इसका विरोध नहीं कर रहा है, तो उसने भगवान् कृष्ण का स्मरण किया। फलतः उसका वस्त्र अपार हो गया। दुश्शासन थककर अलग हो गया। भीम ने क्रोध से कहा : 'मैं रणाङ्गण में इसका रक्त पीऊँगा।' कर्ण ने ताली बजाकर हँसते हुए दुर्योधन की तरफ देखा। दुर्योधन ने अपनी पलथी दिखलाकर द्रौपदी से उस पर बैठने को कहा। द्रौपदी ने क्रोध से उसे शाप दिया। भीम ने प्रतिज्ञा की कि मैं युद्धभूमि पर गदा से दुर्योधन की ऊरू (जांघ) तोड़ूँगा।' अर्जुन ने घोषणा की कि 'मैं रणाङ्गण में कर्ण को मार गिराऊँगा।'

धृतराष्ट्र ने झगड़ा तोड़ने के लिए युधिष्ठिर को आधा राज्य दे समझा-बुझा बिदा किया। इतने में शकुनि ने उसे पुनः पुकारा और बारह वर्ष के वनवास और एक वर्ष के अज्ञातवास की बाजी लगा फिर खेलने को कहा। युधिष्ठिर तैयार हो गये। इस बार भी पुनः शकुनि ही जीता।

युधिष्ठिर कुन्ती को विदुर के घर तथा पुत्रों को द्वारका में रख चारों भाइयों तथा द्रौपदी के साथ वन गये। हजारों ब्राह्मण भी उनके साथ हो लिये। आपत्ति-काल में भी युधिष्ठिर ने ब्राह्मणों की आराधना नहीं छोड़ी। उन्होंने सूर्य की आराधना कर उनसे एक पात्र (स्थाली) प्राप्त किया। उससे अपार अन्न निकलता। उसी अन्न से वे ब्राह्मणों को तृप्त करते। भीम आदि ने युधिष्ठिर से शत्रु का नाश करने की अनुमति माँगी, पर उन्होंने धर्म को ध्यान में रख अनुमति नहीं दी। मुनिजनों की सेवा और पुराण-श्रवण करते हुए वे काम्यक और द्वैत वनों में रहने लगे।

श्री वेदव्यास की आज्ञा से युधिष्ठिर ने अर्जुन को भगवान् शंकर से पाशुपतास्त्र पाने के लिए हिमालय भेजा। वहाँ उसने तप किया। शंकर जी प्रसन्न हुए और किरात का रूप धारण कर उसके पास आये। एक वराह के लिए शंकर जी का अर्जुन से युद्ध हुआ। अर्जुन के पराक्रम से प्रसन्न होकर शंकर जी ने उसे पाशुपतास्त्र दिया।

इसके बाद मातलि उसे स्वर्ग ले गया। वहाँ अर्जुन ने दिव्यास्त्र प्राप्त किये। स्वर्ग में उर्वशी अर्जुन को देख उस पर मुग्ध हो उठी। किन्तु अर्जुन ने उसकी प्रार्थना अस्वीकार की। इस पर उर्वशी ने उसे षण्ढ होने का शाप दिया। इन्द्र ने अर्जुन को समझाकर शान्त किया। उन्होंने कहा: 'वत्स, अज्ञातवास के समय यह शाप तुम्हारा सहायक ही सिद्ध होगा।' अर्जुन ने निवातकवच और कालकेय दानवों को मारकर इन्द्र को उनसे प्राप्त अस्त्र-विद्या की गुरुदक्षिणा दी।

इस प्रकार पाँच वर्षों तक अद्भुत कार्य करते हुए अर्जुन वन में

रहा। इसी बीच उसने भाइयों को अपना वृत्तान्त निवेदन करने के लिए लोमश ऋषि को भेजा। अर्जुन का वृत्तान्त सुनकर युधिष्ठिर भाइयों और द्रौपदीसहित लोमश ऋषि के साथ तीर्थयात्रा करने के लिए निकले। बदर्याश्रम में पहुँचकर राजा वृषपर्वण का दर्शन कर उत्तर की तरफ बढ़े।

एक दिन द्रौपदी ने मार्ग में अद्भुत कमल देखे। उसने भीमसेन से उन्हें लाने की प्रार्थना की। भीम कमल लाने गया। मार्ग में उसकी हनूमान् जी से भेंट हुई। उनसे विदा हो भीम उत्तर की तरफ बढ़ा। वहाँ उसने कमलों से भरा एक तालाब देखा। उनमें उतरकर उसने कमल तोड़े। इतने में रक्षकों ने उसे मना किया। वह उनकी अवहेलना कर आगे बढ़ा। इस पर उसका रक्षकों से युद्ध हुआ। उसने रक्षकों को मार डाला। वहीं उसकी पत्नियों सहित घटोत्कच के पुत्रों से भेंट हुई। वहाँ से लौटकर उसने द्रौपदी को कमल दिये। एक बार मणिभद्र और उसके यक्षों से भीम का युद्ध हुआ। भीम ने उन्हें मार डाला। इस पर कुबेर उसके पराक्रम से अत्यन्त प्रसन्न हुए। उन्होंने भीम को शान्त करने के लिए उसकी स्तुति की। अर्जुन स्वर्ग से लौटकर भाइयों के पास पहुँचा। वे सब मिलकर द्वैत वन आये।

एक बार दुर्योधन पाण्डवों को अपना ऐश्वर्य दिखलाने की इच्छा से ग्राम-भ्रमण के व्याज से द्वैतवन आया। अचानक सरो विहार की इच्छा से चित्रसेन गन्धर्व भी वहाँ आ पहुँचा। दुर्योधन के सिपाहियों ने उसे मना किया तो उसने उन्हें मार डाला। कर्ण को भी भगाकर वह दुर्योधन को बाँध ले जाने लगा। इस पर दुर्योधन की स्त्री भानुमती जोरों से चिल्लाने लगी। पाण्डवों ने उसका आर्तनाद सुना। उन्होंने चित्रसेन को ललकार कर पराजित किया और दुर्योधन को छुड़ाया। भीम आदि उसे युधिष्ठिर के सामने ले आये। युधिष्ठिर ने उसकी सान्त्वना कर उसे विदा किया। दुर्योधन इस अपमान से बड़ा दुःखी हुआ। उसने अनशन कर प्राण त्यागने का विचार किया। परन्तु शकुनि ने उसे ऐसा करने से

पुनः मना किया। वे उसे समझा-बुझाकर घर ले गये। दुर्योधन ने कर्ण को दिग्विजय के लिए भेजा। कर्ण ने सब राजाओं को जीत वश में कर लिया। अब दुर्योधन ने 'पौण्डरीक-यज्ञ' किया और वह अपने को कृतार्थ मानने लगा।

एक बार जयद्रथ शिकार के लिए जङ्गल गया। वहाँ वह द्रौपदी को देख कामार्त हुआ। वह उसे अकेली पा बलपूर्वक उठा ले गया। जब पाण्डव शिकार खेल घर लौटे तो उन्होंने यह वृत्तान्त सुना। वे तुरत जयद्रथ के पीछे दौड़े। उस दुष्ट को पकड़कर युधिष्ठिर के सामने ले आये। भीम ने उसे मार डालने की आज्ञा मांगी। किन्तु युधिष्ठिर ने बहन के दुःख का विचार कर उसे छुड़ावा दिया। परन्तु जयद्रथ बड़ा दुष्ट था। उसने शंकर जी की आराधना कर अर्जुन को छोड़ सब पाण्डवों को युद्ध में जीतने का वर पा लिया।

एक बार इन्द्रदेव ब्राह्मण के वेष में कर्ण के पास पहुँचे उन्होंने कर्ण से उसके कुण्डल और कवच की भिक्षा माँगी। कर्ण बड़ा दानी था। उसने उन्हें दोनों पदार्थ दे दिये। इन्द्र बड़े प्रसन्न हुए। उन्होंने कर्ण को एक वीर का अचूक नाश करनेवाली शक्ति प्रदान की। इसी शक्ति से आगे चलकर कर्ण ने घटोत्कच का नाश किया।

जब पाण्डव महर्षि तृणबिन्दु के आश्रम में रहते थे, एक हिरन किसी तपस्वी ब्राह्मण की अरणी ले भागा। ब्राह्मण ने युधिष्ठिर से अरणी ला देने को कहा। युधिष्ठिर भाइयों सहित अरणी खोजते हुए घोर वन में पहुँचे। वे सभी बहुत प्यासे हो गये। एक-एक कर पानी पीने के लिए पास के तालाब के किनारे गये। वहाँ एक यक्ष रहता था। जो पानी पीने के लिए तालाब पर आता, उससे वह प्रश्न पूछता और उत्तर देने में अवज्ञा करने पर मार गिरा देता।

जब चारों भाई लौटकर नहीं आये, तो युधिष्ठिर उन्हें खोजने चले। युधिष्ठिर ने तालाब के तट पर उन्हें गिरा देखा। उन्होंने निश्चय किया कि

तालाब का जल ही इनकी मृत्यु का कारण है। वे भी जल पीने बढ़े। उस यक्ष ने उनसे भी कहा कि 'मेरे प्रश्न का उत्तर देकर जल पिओ। यदि मेरी बात की अवहेलना करोगे तो तुम्हें भी भाइयों के रास्ते जाना पड़ेगा।' युधिष्ठिर ने उसके बहुत-से प्रश्नों का उत्तर दिया। अन्त में यक्ष ने कहा : 'इन भाइयों में से तुम जिसे चाहो, एक को हम जिला देंगे।' इस पर युधिष्ठिर ने नकुल का प्राणदान माँगा। यक्ष ने पूछा : 'भीम और अर्जुन को छोड़ तुम नकुल को क्यों चाहते हो?' उन्होंने उत्तर दिया : 'कुन्ती और माद्री हमारी दो माताएँ हैं। कुन्ती का पुत्र मैं जीवित हूँ। नकुल के जी जाने से हमारी दोनों माताएँ जीवित-पुत्रा हो जायँगी।' यक्ष ने प्रसन्न होकर सब भाइयों को जिला दिया। जाते-जाते उसने कहा : 'वत्स! हम धर्मराज हैं। तुम्हारी परीक्षा लेने के लिए यहाँ आये थे। तुम्हारी कोमल भावनाओं से बहुत प्रसन्न हैं। जो चाहो, वर माँगो। तेरहवें वर्ष तुम सफलता से अज्ञातवास करोगे।'

यक्षरूपधारी धर्मराज के चले जाने पर युधिष्ठिर अपने आश्रम में आये। उन्होंने ब्राह्मण को उसकी अरणी दे विदा किया। अपने सेवकों को भी लौटा दिया।

तेरहवाँ वर्ष आरंभ होते ही युधिष्ठिर आदि अज्ञातवास के लिए विराटनगर गये। वहाँ युधिष्ठिर स्वयं कंक नाम से ब्राह्मण के वेष में रहने लगे। भीम वल्लव नाम से सूद के वेष में, अर्जुन बृहन्नला नाम से षण्ढ बनकर, नकुल सईस बनकर तथा सहदेव ग्वाल बनकर रहने लगे। द्रौपदी रानी की परिचारिका सैरन्ध्री बनकर रहने लगी।

पाण्डव विराट नगर में अज्ञासवास कर रहे थे। वहाँ कीचक नाम का राजा का श्यालक भी रहता था। एक दिन सैरन्ध्री वेष में रहनेवाली द्रौपदी महारानी की आज्ञा से किसी काम से उसके घर गयी। कीचक ने उससे रमण का प्रस्ताव किया। जब द्रौपदी ने विरोध किया तो कीचक ने उसे बहुत मारा। द्रौपदी ने एकान्त में भीम से कीचक को मार डालने

के लिए कहा। भीम ने व्याज से कीचक को नृत्यशाला में बुलाया। वहाँ उसने उसे रात में मार डाला। सैरन्ध्री चिल्लाने लगी कि 'गन्धर्वों ने कीचक को मार डाला।' शोर सुनकर कीचक के सौ भाई वहाँ आ पहुँचे। वे कीचक के मृतशरीर और सैरन्ध्री को स्मशान ले गये। उन्होंने वहाँ चिता जलायी, सैरन्ध्री डर उठी और चिल्लाकर रोने लगी। उसका आर्तनाद सुन भीम वहाँ आया। उसने सौ शत्रुओं को मारकर द्रौपदी को छुड़ा लिया।

दुर्योधन ने गुप्तचरों द्वारा कीचक-वध का समाचार सुना। वह तुरत समझ गया कि यह काम भीम का ही है। उसने सुशर्मा को आज्ञा दी कि विराटनगर जाकर गायों का हरण करो। यदि पाण्डव बचाने आवें तो शोर मचाकर बात खोल दो और पाण्डवों के अज्ञातवास का व्रत तोड़ दो। सुशर्मा विराटनगर पहुँचा। वहाँ उसने रक्षकों को बाँध दिया और गायें लेकर चला। परन्तु भीम ने उसे पकड़ लिया। वह उसे मार डालता, परन्तु युधिष्ठिर के कहने पर छोड़ दिया। उधर विराटनगर की उत्तर तरफ दुर्योधन ससैन्य खड़ा था। उसने ग्वालों से बलपूर्वक गायें छीन लीं। ग्वालों ने विराट राजा के पुत्र उत्तर से रक्षा की याचना की। विराट का राजकुमार बृहन्नला को सारथी बनाकर मैदान में आया, परन्तु कौरवों की विशाल सेना देख रोता हुआ भागा। बृहन्नला ने उसे समझाया और अपने को अर्जुन होने का विश्वास दिलाया। उसने श्मशान के शमीवृक्ष से अपने आयुध लिये। अज्ञातवास का समय पूरा हो चुका था। अतः वह विराट के राजकुमार को सारथी बनाकर दुर्योधन आदि कौरवों से खुलकर लड़ा। उसने प्रस्वापनास्त्र से शत्रुओं को सुप्त कर दिया और उनके कपड़े छीनकर उन्हें छोड़ दिया।

दूसरे दिन तीर्ण-प्रतिज्ञ पाण्डव द्रौपदी सहित विराट की सभा में पहुँचे। राजा ने युधिष्ठिर को अपने सिंहासन पर बैठाया। उसे अपने पुत्र से

उनका वृत्तान्त सुन बड़ा विस्मय हुआ। राजा ने अर्जुन के पुत्र के साथ अपनी कन्या का विवाह कर दिया।

पाण्डवों के प्रकाश में आने पर कृष्ण, सात्यकी, द्रुपद आदि उनसे मिलने आये। विराट भी अपनी सेना सहित उनकी सहायता के लिए खड़ा हुआ, किन्तु युधिष्ठिर अपने संबंधियों की हत्या नहीं करना चाहते थे। अतः उन्होंने दुर्योधन से सन्धि करने के लिए भगवान् कृष्ण को दूत बनाकर भेजा। उन्होंने दुर्योधन से पाण्डवों के लिए केवल पाँच गाँव माँगे। परन्तु दुर्योधन और उसके मित्रों ने कुछ भी देने से इनकार कर दिया। दुर्योधन ने कृष्ण को पकड़ने की आज्ञा दी। इस पर क्रुद्ध होकर कृष्ण ने अपना भयानक रूप दिखाया। भीष्म आदि वृद्धों ने कृष्ण को शान्त कर विदा किया। कृष्ण ने आकर पाण्डवों को सारा वृत्तान्त कह सुनाया। अब दोनों तरफ से युद्ध की तैयारियाँ होने लगीं।

युद्ध के लिए कौरवों ने भीष्माचार्य को अपना सेनापति बनाया तो पाण्डवों ने धृष्टद्युम्न को। दोनों तरफ की सेनाएँ कुरुक्षेत्र के मैदान में आ डटीं। इसी समय अर्जुन को युद्ध में बन्धुओं को मारने में विरक्ति हुई। श्रीकृष्ण ने उसे गीता का उपदेश देकर लड़ने के लिए खड़ा किया। कौरवों का पाण्डवों के साथ घोर युद्ध हुआ। दस दिन की लड़ाई के बाद अर्जुन ने भीष्म को गिरा दिया। वे शरशय्या पर पड़े रहे।

भीष्म के गिर जाने पर दुर्योधन ने द्रोणाचार्य को सेनापति बनाया। पुनः युद्ध आरम्भ हुआ। तीसरे दिन अर्जुन संशप्तकों से लड़ने के लिए गया। उसकी अनुपस्थिति में द्रोणाचार्य ने चक्रव्यूह रचा। अभिमन्यु लड़ते हुए व्यूह में घुस गया। भीम आदि पाण्डव भी उसकी सहायता के लिए उसमें घुसना चाहते थे, परन्तु जयद्रथ ने उन्हें व्यूह के द्वार पर ही रोक रखा। भीतर अभिमन्यु लड़ता हुआ थक गया। छः महारथियों ने उसे घेरकर मार डाला।

संशप्तकों के युद्ध से वापस लौटने पर अर्जुन ने रात में अभिमन्यु की मृत्यु का हाल सुना। उसने क्रुद्ध हो प्रतिज्ञा की कि 'कल सूर्यास्त के पहले

जयद्रथ को मार डालूँगा। यदि ऐसा न कर सका तो अग्नि में प्रवेश कर प्राण दे दूँगा।' यह समाचार सुनकर कौरव द्रोणाचार्य को अगुआ करकर जयद्रथ की रक्षा करने लगे। दूसरे दिन घोर युद्ध हुआ। सायंकाल का समय आया। अर्जुन अपनी प्रतिज्ञा पूरी नहीं कर सका। उसने चिता जलवायी। इतने में जयद्रथ दिखायी दिया। सूर्य भी अस्त नहीं हुआ था। अर्जुन ने तुरन्त जयद्रथ का सिर उड़ा दिया।

इस घटना पर दुर्योधन बड़ा क्रुद्ध हुआ। उसने रात ही में युद्ध छेड़ दिया। इस युद्ध में घटोत्कच द्रोणाचार्य आदि योद्धाओं से खूब लड़ा। जब कर्ण ने देखा कि वह किसीसे मारा नहीं जा रहा है, तो उसने इन्द्र की दी हुई शक्ति से उसका संहार किया।

दूसरे दिन द्रोणाचार्य ने विराट और द्रुपद को मारकर पाण्डवों के लिए बड़ी भयावह स्थिति उत्पन्न कर दी। तब कृष्ण आदि की प्रेरणा से द्रोणाचार्य को छल द्वारा मारने के लिए युधिष्ठिर ने जोर से कहा : 'अश्वत्थामा मृतः'। इसके बाद उन्होंने धीरे से कहा : 'गजः'। द्रोणाचार्य ने केवल पहला वाक्य सुना। वे युधिष्ठिर को सत्यवादी मानते थे। अतः उनकी बात पर विश्वास कर द्रोणाचार्य ने दुःख से शस्त्र त्याग दिया। तब धृष्टद्युम्न ने दौड़कर उनका सिर उड़ा दिया। अश्वत्थामा ने जब यह बात सुनी तो उसने सब पाण्डवों का वध करने की प्रतिज्ञा की। उसने पाण्डवों पर नारायणास्त्र छोड़ा। कृष्ण ने उसे शान्त कर दिया। यह देख अश्वत्थामा को बड़ा दुःख हुआ। जब उसने व्यास जी से सुना कि कृष्ण और अर्जुन नर और नारायण हैं, तो उसने पश्चात्ताप करना छोड़ दिया।

द्रोणाचार्य के बाद दुर्योधन ने कर्ण को सेनापति बनाया। फिर युद्ध आरंभ हुआ। इस युद्ध में भीम ने दुःशासन को मार डाला। क्रुद्ध कर्ण अर्जुन से लड़ने के लिए उत्सुक था। सारथी शल्य ने उसे हतोत्साह करने का प्रयत्न किया, परन्तु वह असफल रहा। कर्ण का अर्जुन से युद्ध आरंभ हुआ। गुरु के शाप से कर्ण को भार्गवास्त्र का विस्मरण हो गया। इधर

उसके रथ के चक्र पृथ्वी में फँस रहे थे। रणांगण में वह बड़ी उलझन में पड़ गया। अन्त में सायंकाल होते-होते अर्जुन ने उसे मार डाला।

दूसरे दिन शल्य कौरवों के सेनापति हुए। उन्हें युधिष्ठिर ने मार डाला। नकुल ने शकुनि को मारा और सहदेव ने शकुनि के पुत्र का अन्त किया।

तब दुर्योधन भयभीत हुआ। उसने एक सरोवर में प्रवेश कर जल का स्तम्भन किया। भीम आदि वहाँ गये और उसकी भर्त्सना कर उसे बाहर निकाला। भीम के साथ उसका युद्ध हुआ। भीम ने गदा से उसके ऊरु तोड़कर उसे पृथ्वी पर गिरा दिया। उसने उसके सिर पर ठोकर मारी और उसकी भर्त्सना की। युधिष्ठिर ने भीम को मना किया। उन्होंने दैव की निन्दा कर दुर्योधन को शान्त किया। पाण्डव कृतकृत्य हो शिविर में गये।

इधर हार्दिक्य, कृपाचार्य और अश्वत्थामा दुर्योधन के पास आये। उन्होंने उसे सान्त्वना दी। अश्वत्थामा ने धृष्टद्युम्न आदि का नाश करने की प्रतिज्ञा की। उसने रात में धृष्टद्युम्न, पाण्डवों के पुत्र और अन्य सैनिकों को जगाकर मार डाला, परन्तु कृष्ण के प्रताप से वह पाण्डवों को न मार सका। दूसरे दिन द्रौपदी भाई और पुत्रों के लिए विलाप करने लगी। इस पर भीम आदि अश्वत्थामा का वध करने के लिए निकले। अश्वत्थामा ने इन पर अस्त्र चलाया। उसका प्रतीकार करने के लिए अर्जुन ने ब्रह्मास्त्र चलाया। भीम ने अश्वत्थामा के सिर की मणि निकाल ली। इससे द्रौपदी बहुत प्रसन्न हुई। अनन्तर पाण्डवों ने मरे हुए लोगों को पानी दिया, उनका श्राध्य-तर्पण किया और उनके स्त्रियों को सान्त्वना दी। अब युधिष्ठिर राजा हुए।

युधिष्ठिर राजा तो हुए, किन्तु स्वजनों की मृत्यु से उन्हें बड़ा ही निर्वेद हुआ। कृष्ण की मन्त्रणा से धर्म का रहस्य समझने के लिए वे शरशय्या पर पड़े भीष्म के पास पहुँचे। भीष्म ने उन्हें राजधर्म, आपद्धर्म आदि सब प्रकार के धर्मों का उपदेश दिया। अब युधिष्ठिर के मन में

आचार्य के बध से उत्पन्न पाप का क्षालन करने का इच्छा हुई। इसके लिए उन्होंने बन्धुओं की सहायता से दिग्विजय कर अश्वमेध यज्ञ किया।

उधर सौ पुत्रों के नाश से संतप्त हो धृतराष्ट्र वन चले गये। युधिष्ठिर भी उनका दर्शन करने वन आये। उसी समय विदुर जी स्वर्ग सिधारे। स्त्री-सहित धृतराष्ट्र और कुन्ती भी दवाग्नि में जल मरे। युधिष्ठिर उनका और्ध्वदैहिक कार्य कर नगर लौट गये।

कुछ दिनों के बाद उन्होंने अर्जुन के मुख से प्रभास-क्षेत्र में यादवों के नाश का वृत्तान्त सुना। परम हितैषी श्री कृष्ण के भी महानिर्वाण का दुःखद समाचार उन्हें मिला। इस पर निर्विण्ण हो वे भी स्वर्ग जाने को उत्सुक हुए। उन्होंने पौत्र परीक्षित् को राज्य दे द्रौपदी और भाइयों सहित उत्तर दिशा की ओर प्रयाण किया।

पाण्डवों के उत्तर दिशा की ओर प्रस्थान करते ही मार्ग में एक कुत्ता उनके साथ हो लिया। युधिष्ठिर के नेतृत्व में सब स्वर्ग की ओर आगे बढ़े। मार्ग में सहदेव आदि भाई एक-एक कर गिर पड़े। वे जब चिल्लाने लगे तो युधिष्ठिर ने उनकी तरफ देखकर कहा कि 'यह तुम्हारे पाप का फल है।' युधिष्ठिर आगे बढ़े। इतने में स्वर्गदूत ने उनसे कहा : 'इस कुत्ते को यहीं छोड़ तुम स्वर्ग जाओ।' युधिष्ठिर ने उत्तर दिया : 'मैं अपने भक्त को नहीं छोड़ूँगा।' इस पर स्वर्गदूत ने युधिष्ठिर को समझाया : 'कर्म-वैचित्र्य के कारण प्राणियों को विभिन्न लोक प्राप्त होते हैं। यह कुत्ता आपके साथ शुभगति नहीं प्राप्त कर सकता।' युधिष्ठिर ने उसे उत्तर दिया : 'इसे छोड़ मैं स्वर्ग का सुख नहीं चाहता।' इसी समय वह कुत्ता अपना कृत्रिम रूप छोड़ धर्मराज के रूप में प्रकट हुआ। उसने युधिष्ठिर से कहा : 'पुत्र! तुम्हारी परीक्षा हो चुकी। तुम स्थिर हो। निश्चय ही स्वर्ग प्राप्त करो।'

युधिष्ठिर इन्द्रलोक पहुँचे। वहाँ उन्होंने दुर्योधन, कर्ण आदि को बड़े आनन्द से रहते देखा। उन्हें बड़ा आश्चर्य हुआ। इतने में नरक के निवा-

सियों की चीखें कानों में पड़ीं। दयालु युधिष्ठिर उन्हें देखने चले। देवताओं ने उन्हें मना किया, परन्तु उन्होंने नहीं माना। नरक में पहुँचकर उन्होंने स्वजनों को यातना भोगते देखा। उन्होंने युधिष्ठिर से कहा : 'भाई ! क्षणभर यहाँ बैठो और हमें सुखी करो। तुम्हारे सान्निध्य से हमें यहाँ की यातना का कष्ट नहीं हो रहा है। तुम्हारे जाने पर पुनः नरक का कष्ट होगा।' यह सुन दयालु युधिष्ठिर ने वहाँ रहने का विचार किया। इस पर देवताओं ने उनसे कहा : 'तुम ऐसा मत करो। मनुष्यों की गति अपने-अपने कर्मों के अनुसार भिन्न-भिन्न होती है।' युधिष्ठिर ने उन्हें उत्तर दिया : 'मैं अपने बन्धुओं को दुःख में छोड़ इन्द्रपद भी नहीं चाहता।' यह सुन देवता सन्तुष्ट हुए। उन्होंने का : 'यह माया तुम्हारी परीक्षा के लिए रची गयी थी। परीक्षा हो चुकी। अब स्वर्ग चलो।'

देवता युधिष्ठिर को स्वर्ग ले आये। वहाँ उन्होंने भाई, भार्या, मित्र और अनु जीवियों के साथ उत्तम सुख का उपभोग किया। उन्होंने अपने सद्गुणों से अक्षय सुख प्राप्त किया।

काव्यों में अलङ्कारों का उपयोग काव्य की शोभा बढाने तथा उक्ति को विशद करने के लिए किया जाता है। ये मुख्य रूप से दो प्रकार के होते हैं : शब्दालङ्कार और अर्थालङ्कार। इन दोनों को मिलाने से उभयालङ्कार नाम का अलङ्कारों का एक तीसरा प्रकार भी खड़ा हो जाता है। उभयालङ्कारों की अपनी छटा भी निराली है, तथापि मूलभूत पदार्थ शब्दालङ्कार और अर्थालङ्कार ही हैं। पूज्य शास्त्रीजी की रचनाओं में दोनों प्रकार के अलङ्कारों का प्रयोग प्रचुर मात्रा में मिलता है। आपका 'हंसाष्टक' सभङ्ग और अभङ्ग दोनों प्रकार के शब्द-श्लेषों का उत्तम उदाहरण है। 'अलि-विलासिसंलोप' और अन्य रचनाओं में भी शब्दश्लेष का चमत्कार दिखाई देता है। आपका श्लेष कठिन नहीं होता। श्लेष के स्थल को पढ़ने पर अर्थ समझने में प्रायः देर नहीं

लगती। सुबोध होने के कारण आपका श्लेष रसास्वाद में बाधक नहीं होता और काव्य की शोभा बढ़ाता है।

पूज्य शास्त्री जी अर्थालङ्कारों के प्रयोग में भी सिद्धहस्त हैं। आपके काव्यों में उपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा, अर्थान्तरन्यास आदि सभी मुख्य-मुख्य अर्थालङ्कारों के प्रयोग मिलते हैं। ये अलङ्कार जहाँ आते हैं, उक्ति के वैचित्र्य से काव्य की शोभा बढ़ाते हैं और उसका अर्थ स्पष्ट कर देते हैं। पूज्य शास्त्री जी दर्शनशास्त्र के भी अगाध विद्वान् थे। अतः आपकी अधिकतर उपमाएँ शास्त्र के क्षेत्र से ली गयी हैं।

'भारत-कथा' बालकों के लिए बनायी गयी है। इसमें महाभारत की कथा बहुत ही संक्षेप में सूत्रों की भाषा में वर्णित है। ऐसा होने पर भी दो सुन्दर उपमाओं के उदाहरण इसमें आ ही गये हैं। पहला उदाहरण पैंतीसवें श्लोक में है। राजा द्रुपद के घर स्वयंवर में अर्जुन के सफल होने पर दुर्योधन आदि उससे लड़ने आये। उस समय अर्जुन ने भीम की सहायता से उन्हें वैसे ही मार भगाया, जैसे विवेक आगम की सहायता से दोषों को दूर कर देता है। दूसरा उदाहरण पैंतालीसवें श्लोक में है। दोनों ही उपमाएँ शास्त्र के क्षेत्र से ली गयी हैं। पहली उपमा का सम्बन्ध योग से है, तो दूसरी का सांख्य से।

काव्य-शैली की कुछ विशेषताएँ : पूज्य शास्त्री जी की साहित्यिक रचनाओं में भाषा की दृष्टि से प्रसाद गुण है। आपके वाक्य छोटे-छोटे और स्पष्ट हैं। रचना में बहुत बड़े-बड़े समास नहीं होते। प्रायः कर्णकटु शब्दों का प्रयोग नहीं मिलता। आप वाक्यों में अधिकतर गणों के क्रियापदों का प्रयोग करते हैं। वाक्य पढ़ते ही प्रायः अर्थ तुरत समझ में आ जाता है। रीति वैदर्भी है और भाषा व्याकरण की दृष्टि से परिष्कृत है। 'भारत-कथा' केवल मूल कथा का परिचय कराने के लिए लिखी गयी है। कवि ने इसमें अपना कवित्व दिखलाने का प्रयत्न नहीं किया है। 'अलि-विलासि-संलाप' और अन्य रचनाओं में आपकी काव्य-कला का परिचय मिलता है। उन रचनाओं में माधुर्य और ओज गुण का भी

आस्वाद मिलता है। भाषा का संक्षेप और विस्तार करने की आपकी कला भी अद्वितीय है। आपका छन्दशास्त्र पर भी पूरा अधिकार है। 'भारत-कथा' तो अनुष्टुप् छन्द में लिखी गयी है। किन्तु आपकी अन्य रचनाओं में अनेक छन्दों का उत्तम प्रयोग दिखाई देता है।

शान्तरस के महाकवि : यद्यपि पूज्य शास्त्री जी के काव्यों में शृङ्गार, करुण, शान्त, अद्भुत आदि मुख्य रसों की अद्भुत दीप्ति के उदाहरण मिलते हैं, तथापि विचार करने पर उनमें शान्त रस का ही वजन अधिक दिखाई देता है। 'भारत-कथा' में महाभारत की कथा है। 'ध्वन्यालोक' के कर्ता आनन्दवर्धन के विचार से महाभारत का मुख्यरस शान्तरस है। ऐसी स्थिति में 'भारत-कथा' में भी शान्त रस ही मानना चाहिए। 'हंसाष्टक' में शान्त रस की सत्ता स्पष्ट ही है। इसमें कवि ने संसार के प्रति निर्वेद दिखाकर ब्रह्मसारूप्य-प्राप्ति को उपादेय बतलाया है। 'अलि-विलासि-संलापः' में शृङ्गार और शान्त का विचित्र संमिश्रण है। दोनों के आश्रय भिन्न होने के कारण और दोनों के बीच अन्य रसों के आते रहने के कारण दोनों का वहाँ विरोध नहीं है। आपके अन्य काव्यों में भी निर्वेद स्थायीभाववाला शान्त रस ही विशेष दिखाई देता है। यह सब आपके दर्शनशास्त्र के ज्ञान का परिणाम है। आपका प्रधान विषय साहित्य था, पर आपके मन का झुकाव दर्शनों की तरफ अधिक था। उपर्युक्त कारणों से हम पूज्य शास्त्री जी को 'शान्तरस के महाकवि' कह सकते हैं।

हम पहले कह चुके हैं कि 'भारत-कथा' की रचना बालकों को महाभारत की कथा से परिचित कराने के उद्देश्य से की गयी है। इसका दूसरा उद्देश्य बालकों को यह उपदेश देना है कि सत्-कार्य से कल्याण-प्राप्ति होती है। इन उद्देश्यों से यह स्पष्ट है कि पूज्य शास्त्री जी ने इस कथा की रचना विश्व-मंगल की भावना से ही प्रेरित होकर की है।

काशी हिन्दू विश्वविद्यालय,

—कान्तानाथ शास्त्री तैलंग

गुरुपूर्णिमा, सं० २०२१

अनुक्रम

[कोष्ठ में श्लोक संख्या है ।]

विषय	पृष्ठ-संख्या
१. **भारतकथा : आदिपर्व** पाण्डु का वनगमन पाण्डव-जन्म, पाण्डु की मृत्यु,माद्री का सहगमन, कुन्ती और पाण्डवों का हस्तिनापुरआगमन (१—५)	१—३
२. धृतराष्ट्र द्वारा पाण्डवों का कौरवों के साथ पालन-पोषण, अस्त्रशिक्षा, गुरुदक्षिणा, कौरवों की उनसे शत्रुता (६—१५)	४—६
३. हिडिम्ब-वध, घटोत्कच-जन्म, बकासुर-वध (१६—२७)	६—१४
४. द्रौपदी-परिणय और राज्य प्राति (२८—३८)	१४—१६
५. नारद-उपदेश, अर्जुन-वनवास, सुभद्राहरण, उलूपी-विवाह, पाण्डवों को पुत्रप्राप्ति (३९—४६)	२०—२३
६. खाण्डव-वनदाह (४७—५१)	२४—२६
७. **सभापर्व** : मयासुर का सभामण्डप-निर्माण, राजसूय यज्ञ, जरासन्ध वध, दिग्विजय, श्रीकृष्ण की अग्रपूजा, शिशुपाल-वध, दुर्योधन का अपमान (५२—५८)	२६—२९
८. शकुनि की द्यूतसभा, द्रौपदी का वस्त्रहरण, पाण्डवों की प्रतिज्ञा, पाण्डवों की पराजय (५९—६८)	२९—३३

विषय	पृष्ठ-संख्या
९. **वनपर्व** : कुन्ती और पुत्रों को छोड़ पाण्डवों का वनगमन, सूर्यस्थाली से मुनि-सेवा; अर्जुन की हिमालय-यात्रा, किरातार्जुन-युद्ध, पाशुपतास्त्रप्राप्ति, अर्जुन का स्वर्गगमन (६९—७९)	३४—३९
१०. पाण्डवों की तीर्थयात्रा, कमल की कहानी,-भीम-कुबेर युद्ध (८०—८७)	३९—४३
११. अर्जुन एवं पाण्डवों का द्वैतवनगमन, चित्रसेन द्वारा दुर्योधन की पराजय, दुर्योधन का पौण्डरीक याग और दिग्विजय (८८—९५)	४३—४६
१२. जयद्रथ द्वारा द्रौपदीहरण और पराजय, जयद्रथ को शिव का वरदान, कर्ण द्वारा इन्द्र को कवच-कुण्डल-समर्पण और शक्तिप्राप्ति (९६—१००)	४७—४८
१३. अरणी-अन्वेषण, यक्ष से धर्मराज के प्रश्नोत्तर (१०१—१०९)	४९—५२
१४. **विराटपर्व** : धर्म का अन्तर्धान, पाण्डवों का अज्ञातवास, कीचकवध (११०—११८)	५३—५७
१५. उत्तर-गोग्रहण, बृहन्नला का सारथित्व, अज्ञातवास-समाप्ति, उत्तरा-अभिमन्यु-परिणय (११९—१२८)	५७—६२
१६. **उद्योगपर्व** : रण-निमन्त्रण, सन्धिवार्ता, कृष्ण का प्रत्यावर्तन (१२९—१३३)	६२—६४
१७. **भीष्म पर्व** : भीष्म का सेनापतित्व, अर्जुन मोह, गीतोपदेश, दस दिन घोर युद्ध, भीष्म-पराजय (१३४—१३७)	६४—६५
१८. **द्रोणपर्व** : द्रोण का सेनापतित्व, संशप्तक-विध्वंस, अभिमन्यु को वीरगति, अर्जुन द्वारा जयद्रथ-वध,	

शाप से[1] अपना राज्य छोड़कर जंगल चला गया। उसकी दोनों पत्नियाँ कुन्ती और माद्री भी उसके साथ जंगल गयीं।

पुत्रार्थं तप्यमानस्य तस्य प्रियविधित्सया।
कुन्ती मन्त्रैराजुहाव धर्मानिलपुरन्दरान्॥ २॥

अन्वय—कुन्ती पुत्रार्थं तप्यमानस्य तस्य प्रियविधित्सया मन्त्रैः धर्मानिलपुरन्दरान् आजुहाव।

शब्दार्थ—कुन्ती = ज्येष्ठा पाण्डुपत्नी, पुत्रार्थम् (पुत्रः अर्थः = प्रयोजनं यस्य तत्) पुत्रप्राप्तये, तप्यमानस्य = पीड्यमानस्य तस्य = पाण्डोः, प्रियविधित्सया = प्रियं विधातुमिच्छया, मन्त्रैः = मुनेः दुर्वाससः प्राप्तैः मन्त्रैः, धर्मानिलपुरन्दरान्=(धर्मश्च, अनिलश्च, पुरन्दरश्च इति धर्मानिलपुरन्दराः तान्) धर्मराजं पवनदेवम् इन्द्रं च, आजुहाव = आहूतवती।

भावार्थ—पुत्रप्राप्ति के लिए व्याकुल पाण्डु का हित करने की इच्छा से कुन्ती ने महर्षि दुर्वासा द्वारा प्राप्त मन्त्रों से धर्मराज, पवन और इन्द्र का आवाहन किया।

युधिष्ठिरं भीमसेनमर्जुनं चापि तैः सुतान्।
नकुलं सहदेवं च लेभे माद्री तथाऽश्विनोः॥ ३॥

अन्वय—[सा] तैः युधिष्ठिरं भीमसेनम् अर्जुनं च अपि सुतान् लेभे। तथा माद्री अश्विनोः नकुलं सहदेवं च लेभे।

शब्दार्थ—[सा = कुन्ती], तैः = धर्मानिलपुरन्दरैः, युधिष्ठिरं = (युधिस्थिरः इति युधिष्ठिरः तम्) धर्मराजम्, भीमसेनं=वृकोदरम्,

---

१. एक बार राजा पाण्डु वन में शिकार को गये थे। उस समय उन्होंने मृग-मृगी को रतिक्रीड़ा करते हुए देख मृग पर बाण चला दिया। मृग-वेष में वे किन्दम ऋषि थे। उन्होंने पाण्डु को शाप दिया कि तुम भी अपनी पत्नी से क्रीडा करते समय मृत्यु प्राप्त करोगे। अतएव वे विरक्त हो वनवास करने लगे।

अर्जुनम्=धनञ्जयम्, च=अपि, सुतान्=एतन्नामकान् पुत्रान्, लेभे = प्राप्नोत्। तथा=तेन प्रकारेण, माद्री=कनिष्ठा पाण्डोः पत्नी, अश्विनोः = अश्विनीकुमाराभ्याम्, नकुलं सहदेवं च = एतन्नामकौ पुत्रौ, लेभे= प्राप्तवती।

भावार्थ—कुन्ती ने धर्मराज से युधिष्ठिर को, पवनदेव से भीमसेन को एवं इन्द्र से अर्जुन को प्राप्त किया। इसी प्रकार माद्री ने अश्विनीकुमारों से नकुल और सहदेव नामक दो पुत्रों को प्राप्त किया।

अप्राप्तयौवनेष्वेषु कदाचित् पाण्डुभूपतिः।
माद्रीं कामात् परिष्वज्य ममार मुनिशापतः॥ ४॥

अन्वय—कदाचित् पाण्डुभूपतिः मुनिशापतः एषु अप्राप्तयौवनेषु [सत्सु] कामात् माद्रीं परिष्वज्य ममार।

शब्दार्थ—कदाचित्=दैववशात् कस्मिंश्चित् समये, पाण्डुभूपतिः = (पाण्डुश्चासौ भूपतिः)=राजा पाण्डुः, मुनिशापतः=मृगवेषधारिणः किन्दमर्षेः आक्रोशात्, एषु=युधिष्ठिरादिषु, अप्राप्तयौवनेषु [सत्सु]= (यूनः भावः यौवनम्, न प्राप्तम् इति अप्राप्तम्, अप्राप्तं यौवनं यैः ते अप्राप्तयौवनाः तेषु) तारुण्यम् अलभमानेषु सत्सु, बाल्यावस्थायामेव स्थितेषु इति भावः, कामात्=विषयवासनातः, माद्रीं=कनिष्ठां स्वपत्नीम्, परिष्वज्य=समालिङ्गय, ममार=प्राणान् तत्याज।

भावार्थ—एक समय कामवासना के वशीभूत होकर राजा पाण्डु ने अपनी छोटी पत्नी माद्री का आलिंगन किया। फलतः मृगवेषधारी किन्दम ऋषि के शाप से उन्हें अपने प्राणों से हाथ धोना पड़ा। उस समय सभी राजकुमार छोटे थे।

माद्र्यामनुमृतायां तु कुन्तीं पञ्चसुतावृताम्।
हस्तिनापुरमानैषुस्तदाऽऽश्रमनिवासिनः॥ ५॥

अन्वय—तदा आश्रमनिवासिनः माद्र्याम् अनुमृतायां तु पञ्चसुतावृतां कुन्तीं हस्तिनापुरम् आनैषुः।

शब्दार्थ—तदा = पाण्डोः निधनानन्तरम्, आश्रमनिवासिनः (निवसन्ति ते निवासिनः, आश्रमस्य निवासिनः आश्रमनिवासिनः) आश्रमस्थाः जनाः, माद्रयां = कनिष्ठायां पाण्डुपत्न्याम्, अनुमृतायां तु = सतीभूतायाम् तु, पञ्चसुतावृतां = (पञ्च च ते सुताः पञ्चसुताः, तैः आवृता इति पञ्चसुतावृता तां) = युधिष्ठिरादि-पञ्चपुत्रयुक्ताम्, कुन्तीं = ज्येष्ठां पाण्डुसहधर्मिणीम्, हस्तिनापुरम् = तन्नाम्नीं राजधानीम्, आनैषुः = आनिन्युः।

भावार्थ—राजा पाण्डु का निधन होने के बाद एवं माद्री के सती हो जाने पर आश्रमनिवासी मुनिगण युधिष्ठिरादि पांचों पुत्रोंसहित कुन्ती को हस्तिनापुर ले आये।

तत्र तेषां पितृव्येण धृतराष्ट्रेण यत्नतः।
वर्धितानां गुणवतां द्विषोऽभूवन् पितृव्यजाः।
शतं दुर्योधनमुखा अद्रुह्यंश्च मुहुर्मुहुः॥ ६॥

अन्वय—तत्र दुर्योधनमुखाः शतं पितृव्यजाः पितृव्येण धृतराष्ट्रेण यत्नतः वर्धितानां गुणवतां तेषां द्विषः अभूवन्, च मुहुः मुहुः अद्रुह्यन्।

शब्दार्थ—तत्र = हस्तिनापुरे, दुर्योधनमुखाः = (दुर्योधनः मुखं येषां ते) दुर्योधनप्रमुखाः, शतं = शतसंख्याकाः, पितृव्यजाः = (पितृव्यात् जाताः) पितृव्यपुत्राः, पितृव्येण = पितुः भ्रात्रा, धृतराष्ट्रेण = एतन्नाम्ना राज्ञा, यत्नतः = बहुप्रयत्नात्, वर्धितानां = पालन-पोषणाभ्यां संवर्धितानाम्, गुणवता = दयादाक्षिण्यादिगुणशालिनाम्, तेषां = युधिष्ठिरादीनाम्, द्विषः = शत्रवः, अभूवन् = समजायन्त, च = तथा, मुहुः मुहुः = वारं वारम्, अद्रुह्यन् = वैरम् अकुर्वन्।

भावार्थ—उस हस्तिनापुर राजधानी में धृतराष्ट्र ने परमगुणशाली युधिष्ठिरादि पाण्डवों का बड़े प्रयत्न के साथ लालन-पालन किया। परन्तु दुर्योधन आदि सौ चचेरे भाई शत्रु हो गये और निरन्तर उनसे शत्रुता करने लगे।

भीष्मः पितामहस्तेषां धनुर्वेदाप्तये कृपम्।
न्ययुङ्क्त कृतविद्यांस्तान् द्रोणाचार्याय चार्पयत् ॥ ७ ॥

अन्वय—पितामहः भीष्मः तेषां धनुर्वेदाप्तये, कृपं न्ययुङ्क्त। च कृतविद्यान् तान् द्रोणाचार्याय अर्पयत्।

शब्दार्थ—पितामहः भीष्मः=पितामहेति ख्यातः पितृवितृव्यः भीष्मः, तेषां=कौरवाणां पाण्डवानां च, धनुर्वेदाप्तये (धनुषः वेदः, धनुर्वेदः तस्य आप्तिः, धनुर्वेदाप्तिः, तस्यै) धनुरादिशस्त्रविद्यायाः शिक्षार्थम्, कृपम्=कृपाचार्यम्, न्ययुङ्क्त=न्ययोजयत्। च=तथा कृतविद्यान्=(कृताः विद्याः यैस्ते कृतविद्याः तान्) गृहीतशस्त्रशास्त्रविद्यान्, तान्=पाण्डुपुत्रान् धृतराष्ट्रपुत्रान् च, द्रोणाचार्याय=आचार्याय द्रोणाय, अर्पयत्=प्रादात्।

भावार्थ—भीष्म पितामह ने कौरव और पांडवकुमारों को धनुर्विद्या की शिक्षा देने के लिए कृपाचार्य को नियुक्त किया एवं कुमारों के धनुर्विद्या से परिचित होने पर उन्हें द्रोणाचार्य के अधीन कर दिया।

पाण्डवान् धार्तराष्ट्रांश्च धनुष्पारङ्गतान् गुरुः।
द्रुपदं जयतेत्याह बलाज्जिग्येऽर्जुनेन सः ॥ ८ ॥

अन्वय—गुरुः धनुष्पारङ्गतान् पाण्डवान् धार्तराष्ट्रान् च द्रुपदं जयत इति आह। अर्जुनेन सः बलात् जिग्ये।

शब्दार्थ—गुरुः=द्रोणाचार्यः, धनुष्पारङ्गतान्=(धनुषि पारंगताः धनुष्पारङ्गताः, तान्) धनुर्वेदे निष्णातान्, पाण्डवान्=पाण्डुपुत्रान् (पाण्डोः अपत्यानि पुमांसः पाण्डवाः तान्) युधिष्ठिरादीन्, धार्तराष्ट्रान् च=(धृतराष्ट्रस्य अपत्यानि पुमांसः धार्तराष्ट्राः तान्) धृतराष्ट्रपुत्रान् दुर्योधनादीन् च, द्रुपदम्=पाञ्चालनरेशम्, जयत=विजयध्वम्, इति=एवं आह=अकथयत्। अर्जुनेन=तृतीयपाण्डुपुत्रेण धनञ्जयेन, सः=द्रुपदः, बलात्=हठात्, जिग्ये=विजितः।

भावार्थ—गुरु द्रोणाचार्य ने धनुर्विद्या में निष्णात कौरव और पाण्डव-

कुमारों को आदेश दिया कि द्रुपद को जीतो। तदनुसार अर्जुन ने द्रुपद को हठात् जीत लिया।

कर्णो नाम रवेः पुत्रो दुर्योधनसखोऽभवत्।
शकुनिर्मातुलश्चास्य पाण्डवानभ्यसूयत ॥ ९ ॥

अन्वय--कर्णः नाम रवेः पुत्रः दुर्योधनसखः अभवत्। च अस्य मातुलः शकुनिः पाण्डवान् अभ्यसूयत।

शब्दार्थ—कर्णः नाम=कर्णनाम्ना प्रसिद्धः, रवेः = सूर्यस्य, पुत्रः = सुतः, दुर्योधनसखः = (दुर्योधनस्य सखा, यद्वा-दुर्योधनः सखा यस्य सः) दुर्योधनस्य मित्रम्, अभवत्=समजायत। च = तथा अस्य = दुर्योधनस्य, मातुलः = मातुः भ्राता, शकुनिः=तन्नामा च, पाण्डवान् युधिष्ठिरादीन्, अभ्यसूयत=अद्रुह्यत्।

भावार्थ--सूर्य का पुत्र कर्ण दुर्योधन का मित्र था और दुर्योधन का मामा शकुनि पाण्डवों से द्वेष करता था।

दुर्योधनो भीमसेनं कदाचिद् बलिनां वरम्।
छलाद् दत्त्वा विषं सर्पैर्दंशयित्वा जलेऽमुचत् ॥ १० ॥

अन्वय--कदाचित् दुर्योधनः छलात् बलिनां वरं भीमसेनं विषं दत्वा सर्पैः दंशयित्वा जले अमुचत्।

शब्दार्थ-कदाश्चित्=कस्मिंश्चित् समये, दुर्योधनः=धृतराष्ट्रस्य ज्येष्ठपुत्रः, छलात् = कपटात्, बलिनां = पराक्रमवताम्, वरम् = श्रेष्ठम्, भीमसेनम्= वायुसूनुं वृकोदरम्, विषम्=गरलम्, दत्वा=प्रदाय, भोजयित्वा इति भावः, सर्पैः=पन्नगैः, दंशयित्वा=दंशं कारयित्वा, जले=सलिले नद्याम् इत्यर्थः, अमुचत्=तत्याज।

भावार्थ—एक बार दुर्योधन ने कपट से परम बलशाली भीमसेन को विष देकर और सर्पों से कटवाकर पानी में फेंक दिया।

स वासुकिगृहं प्राप्य पीत्वाऽमृतमुपागतः।
नागायुतसमप्राणोऽधिकं तान् दुःखिनोऽकरोत् ॥ ११ ॥

अन्वय—सः वासुकिगृहं प्राप्य अमृतं पीत्वा उपागतः नागायुत-समप्राणः [सन्] तान् अधिकं दुःखिनः अकरोत् ।

शब्दार्थ—सः=भीमः, वासुकिगृहम्=(वासुकेः गृहम्) नागराज-सदनम्, प्राप्य = आगत्य, अमृतम्=पीयूषम्, पीत्वा = निपीय, नागायुत-समप्राणः=(नागानाम् अयुतं नागायुतम्, तेन समाः प्राणाः यस्य सः) दशसहस्र-गजबलशाली [सन्], तान्=धार्तराष्ट्रान्, अधिकम्=अत्यन्तम्, दुःखिनः=पीडितान्, अकरोत् = चकार ।

भावार्थ—भीमसेन नागराज वासुकि के यहाँ जाकर अमृत पी आया । अमृतपान से उसकी शक्ति दस हजार हाथियों की-सी हो गयी । अतः दुर्योधनादि कौरव उससे और अधिक दुःखी होने लगे ।

अथ पाण्डवघातार्थं धृतराष्ट्रः स्वसूनुभिः ।
नोनुद्यमानो भ्रातृव्यान् प्रैषयद् वारणावते ॥ १२ ॥

अन्वय—अथ धृतराष्ट्रः स्वसूनुभिः पाण्डवघातार्थं नोनुद्यमानः भ्रातृव्यान् वारणवते प्रैषयत् ।

शब्दार्थ—अथ=भीमसेनस्य प्रत्यागमनानन्तरम्, धृतराष्ट्रः=कुरूणां पतिः स्वसूनुभिः=(स्वस्य सूनवः स्वसूनवः, तैः) आत्मनः पुत्रैः दुर्योधनाभिः, पाण्डवघातार्थम्=(पाण्डवानां घातः पाण्डवघातः, स एव अर्थः=प्रयोजनं यस्य तत्) पाण्डवानां वधं कर्तुम्, नोनुद्यमानः = पुनः पुनः प्रेर्यमाणः, भ्रातृव्यान्=शत्रुभूतान् भ्रातृपुत्रान् पाण्डवान्, वारणावते = एतन्नामके नगरे, प्रैषयत्=प्रेषितवान् ।

भावार्थ—भीमसेन के आगमन के अनन्तर दुर्योधनादि ने पाण्डवों का वध करने के लिए धृतराष्ट्र को अनेक बार प्रेरित किया । अन्त में धृतराष्ट्र ने पाण्डवों को वारणावत नामक नगर में भेज दिया ।

पितृव्यो विदुरस्त्वेषां पुरोचनविनिर्मितम् ।
जातुषागारमस्तीति स्नेहाद् गुप्तगिराऽवदत् ॥ १३ ॥

अन्वय—एषां पितृव्यः विदुरः तु पुरोचनविनिर्मितम् [इदम्] जातुषागारम् अस्ति इति स्नेहात् गुप्तगिरा अवदत् ।

शब्दार्थ—एषां = पाण्डवानां, पितृव्यः = पितुः भ्राता, विदुरः तु = तन्नामा, "पुरोचनविनिर्मितम् = (पुरोचनेन विनिर्मितम्) एतन्नामकेन दुर्योधनमन्त्रिणा रचितम् [इदम् = एतत्], जातुषागारम् = (जतुनः विकारः जातुषम्, जातुषं च तत् आगारम् इति) लाक्षागृहम्, अस्ति = विद्यते इति = एवम्, स्नेहात्=प्रणयात्, गुप्तगिरा=(गुप्ता चासौ गीः इति गुप्तगीः, तया) अप्रकट्या वाचा, अवदत् = अवादीत् ।

भावार्थ—पाण्डवों के चाचा विदुर ने स्नेहवश उन्हें गुप्तरूप से यह रहस्य बता दिया कि दुर्योधन के मन्त्री पुरोचन द्वारा बनाया गया यह भवन लाख (लाह) का है ।

जागरूकोऽभवत् तत्र विज्ञायैतद् युधिष्ठिरः ॥ १४ ॥
भीमस्तु निशि कस्यांचिद् दीपयित्वा तमालयम् ।
सभ्रातृमातृकोऽयासीद् विदुरोक्तसुरङ्गया ॥ १५ ॥

अन्वय— तत्र युधिष्ठिरः एतत् विज्ञाय जागरूकः अभवत् । भीमः तु कस्यां चित् निशि तम् आलयं दीपयित्वा सभ्रातृमातृकः विदुरोक्तसुरङ्गया अयासीत् ।

शब्दार्थ—तत्र = वारणावते नगरे, युधिष्ठिरः = धर्मपुत्रः, एतत् = कपटवृत्तम्, विज्ञाय=ज्ञात्वा, जागरूकः=दक्षः, अभवत्=बभूव । भीमः तु= वृकोदरः तु, कस्यां चित् निशि=एकस्यां रात्रौ, तम्=लाक्षाविनिर्मितम्, आलयम्=गृहम्, दीपयित्वा = प्रज्वाल्य, सभ्रातृमातृकः (भ्रातरश्च माता च भ्रातृमातरः ताभिः सहितः) = युधिष्ठिरादिभ्रातृभिः मात्रा कुन्त्या च समेतः सन्, विदुरोक्तसुरङ्गया = (विदुरेण उक्ता विदुरोक्ता, सा चासौ सुरङ्गा इति विदुरोक्तसुरङ्गा तया) विदुरसङ्केतित-सुरङ्गमार्गेण, अयासीत् = विनिर्गतः इत्यर्थः ।

हिन्दी—उक्त वारणावत नगर में युधिष्ठिर यह कपट जानकर सावधान

चले गये। भीमसेन एक रात में उस लाक्षागृह आग लगाकर युधिष्ठिरादि भाइयों और अपनी माता कुन्ती के साथ विदुर द्वारा निर्दिष्ट सुरङ्गमार्ग से निकल गये।

वने सुप्तानमून् रक्षन् हिडिम्बाख्येन रक्षसा।
युद्ध्वैनं मारयामास तत्स्वसुश्चाऽभवत् पतिः॥ १६॥
घटोत्कचं सुतं चास्यां जनयामास राक्षसम्॥ १७॥

अन्वय—[सः] हिडिम्बाख्येन रक्षसा वने सुप्तान् अमून् रक्षन् युद्ध्वा एनं मारयामास च तत्स्वसुः पतिः अभवत्। अस्यां च सुतं घटोत्कचं राक्षसं जनयामास।

शब्दार्थ—[सः=वृकोदरः], हिडिम्बाख्येन=(हिडिम्बः आख्या यस्य सः हिडिम्बाख्यः तेन) हिडिम्बनामकेन, रक्षसा=राक्षसेन, वने=विपिने ('अटव्यरण्यं विपिनम्' इत्यमरः), सुप्तान्=निद्रितान्, अमून्=पाण्डवान्, रक्षन्=पालयन् रक्षणं कुर्वन् इत्यर्थः, युद्ध्वा=युद्धं कृत्वा, एनं=हिडिम्बराक्षसम्, मारयामास=अहन्, च=तथा, तत्स्वसुः=(तस्य स्वसा तत्स्वसा तस्याः) हिडिम्बभगिन्याः हिडिम्बायाः, पतिः=भर्ता, अभवत्=सञ्जातः। च=तथा, अस्यां=हिडिम्बायां सुतम्=पुत्रम्, घटोत्कचम्=एतन्नामकम्, राक्षसम्=दैत्यम्, जनयामास=उत्पादयामास।

भावार्थ—भीम ने जंगल में सोये हुए पाण्डवों की हिडिम्बनामक राक्षस से रक्षा की और युद्ध में उस राक्षस का वध किया। अनन्तर हिडिम्ब की बहन हिडिम्बा के साथ विवाह किया, जिससे घटोत्कच नामक एक राक्षस पुत्र उत्पन्न हुआ।

ततः पुरीमेकचक्रां ययुस्ते जननीयुताः।
कञ्चित् कालं च तत्रोषुर्ब्राह्मणच्छद्मसंवृताः॥ १८॥

अन्वय—ततः जननीयुताः ते एकचक्रां पुरीं ययुः। च तत्र ब्राह्मणच्छद्मसंवृताः [सन्तः] कञ्चित् कालम् ऊषुः।

शब्दार्थ—ततः = घटोत्कचजन्मानन्तरम्, जननीयुताः = (जनन्या युताः) मात्रा कुन्त्या समवेताः, ते = युधिष्ठिरादयः, एकचक्रां=एतन्नाम्नीं, पुरीम्=नगरीम्, ययुः=प्रापुः। च=तथा, तत्र=तस्यां नगर्यां, ब्राह्मणच्छद्म-संवृताः=(ब्राह्मणस्य छद्म ब्राह्मणच्छद्म तेन संवृताः) ब्राह्मणवेषधारिणः [सन्तः], कञ्चित् कालम्=स्वल्पं समयम्, ऊषुः=निवासं चक्रुः।

भावार्थ—इसके बाद वे सभी माता कुन्ती के साथ एकचक्रा नामक नगरी में आये। वहाँ कुछ समय तक ब्राह्मण के वेष में उन्होंने निवास किया।

कदाचित् तत्र शोचन्तं कुन्ती वीक्ष्य द्विजोत्तमम्।
शोककारणमप्राक्षीदसौ चाकथयत् ततः॥ १९॥

अन्वय—कदाचित् कुन्ती तत्र द्विजोत्तमं शोचन्तं वीक्ष्य शोक-कारणम् अप्राक्षीत् च। ततः असौ अकथयत्।

शब्दार्थ—कदाचित्=एकस्मिन् समये, कुन्ती = पाण्डवमाता, तत्र= एकचक्रायां पुर्याम्, द्विजोत्तमम्= (द्विजेषु उत्तमः द्विजोत्तमः तम्) ब्राह्मणश्रेष्ठम्, शोचन्तम्=शोकातुरम्, वीक्ष्य=दृष्ट्वा, शोककारणम्= दुःखस्य हेतुम्, अप्राक्षीत्= पप्रच्छ। च = तथा, ततः = तदनन्तरम्, असौ=द्विजोत्तमः, अकथयत्=कथयामास।

भावार्थ—एक दिन उक्त नगरी में कुन्ती ने एक ब्राह्मण को शोकातुर देख उससे उसके शोक का कारण पूछा। तब ब्राह्मण ने उत्तर दिया।

पुरोऽस्या निकटे क्रव्याद् बकनामास्ति भीषणः।
तस्मै नागरिकैर्देयः क्रमेण नरवान् बलिः॥ २०॥

अन्वय—अस्याः पुरः निकटे बकनामा भीषणः क्रव्यात् अस्ति। नागरिकैः तस्मै क्रमेण नरवान् बलिः देयः।

शब्दार्थ—अस्याः=एतस्याः एकचक्रायाः, पुरः=नगर्याः ('पूः स्त्री पुरी नगर्यौ' इत्यमरः), निकटे=समीपे, बकनामा=(बक इति नाम यस्य सः) एतन्नामकः, भीषणः=भयङ्करः, क्रव्यात्= (क्रव्यं अत्ति इति)

राक्षसः ('राक्षसः कौणपः क्रव्यात्' इत्यमरः) अस्ति = निवसति । नागरिकैः=(नगरे भवाः नागरिकाः तैः) एकचक्रायाः निवासिभिः, तस्मै=बकासुराय, क्रमेण=यथानुसारम्, नरवान्=मनुष्ययुक्तः, बलिः=भक्ष्योपहारः, देयः=प्रदेयः ।

भावार्थ—इस नगरी के समीप बकासुर नामक भयंकर मांसभक्षक एक राक्षस रहता है । यहाँ के नागरिकों को क्रमशः उसे मनुष्य की बलि देनी पड़ती है ।

स वारोऽद्य मम प्राप्तः सुतश्चैकोऽस्ति मे शिशुः ।
तं मोक्तुं नोत्सहे तेन सीदामि सुतरामिति ॥ २१ ॥

अन्वय—अद्य सः वारः मम प्राप्तः, च एकः शिशुः मे सुतः अस्ति, तम् मोक्तुं न उत्सहे, तेन सुतरां सीदामि इति ।

शब्दार्थ—अद्य=वर्तमानावसरे, सः=बलिदानमयः, वारः=वासरः, मम = मे द्विजोत्तमस्य, प्राप्तः=लब्धः । च=तथा, एकः=अनन्यः, शिशुः=बालः, मे=मम, सुतः=पुत्रः अस्ति=वर्तते । तम्=सुतम्, मोक्तुम्=बलिरूपेण त्यक्तुम्, न=नहि, उत्सहे=वाञ्छामि । तेन=हेतुना, सुतराम्=अत्यन्तम्, सीदामि=शोचामि इति ।

भावार्थ—आज वह बार मेरे लिए आया है । मेरा बेटा अभी शैशव में है । उसे बलि बनाना मैं नहीं चाहता, अतः अत्यन्त दुःखी हूँ ।

कुन्ती तमाह मत्पुत्रो बलिरस्य भवेदिति ।
अस्वीकुर्वति तद्विप्रे पुनः सैनं व्यजिज्ञपत् ॥ २२ ॥

अन्वय—कुन्ती तम् आह मत्पुत्रः अस्य बलिः भवेत् इति । विप्रे तत् अस्वीकुर्वति [सति] सा पुनः एनं व्यजिज्ञपत् ।

शब्दार्थ—कुन्ती=पाण्डवमाता, तम् द्विजोत्तमम्, आह=कथयति स्म, मत्पुत्रः= (मम पुत्रः) मम सुतः, अस्य=बकासुरस्य, बलिः=भक्ष्योपहारः, भवेत्=जायेत इति । विप्रे=ब्राह्मणे, तत्=कुन्त्युक्तं वचनम्,

अस्वीकुर्वति = अनुमोदनं न कुर्वति सति, सा = कुन्ती, पुनः = भूयः, एनम्=विप्रम्, व्यजिज्ञपत्=ज्ञापयति स्म।

भावार्थ—कुन्ती ने उस द्विजोत्तम से कहा कि मेरा लड़का इसका बलि होगा। उस ब्राह्मण के अस्वीकार करने पर कुन्ती ने पुनः उससे कहा।

मम सन्ति सुताः पञ्च द्वितीयो मन्त्रसिद्धिमान्।
असंशयं बकं हन्यादिदं गोप्यं भवत्विति ॥ २३ ॥

अन्वय—मम पञ्च सुताः सन्ति, तत्र द्वितीयः मन्त्रसिद्धिमान् अस्ति, सः बकं असंशयं हन्यात्, इदं गोप्यं भवतु इति।

शब्दार्थ—मम = मे कुन्त्याः, पञ्च=पञ्चसंख्याकाः, सुताः=पुत्राः सन्ति=विद्यन्ते। तत्र=तेषु, द्वितीयः=भीमः, मन्त्रसिद्धमान् = (मन्त्राणां सिद्धिः मन्त्रसिद्धिः तया युक्तः) मन्त्रैः कार्यसाधकः [अस्ति=वर्तते]। सः=भीमः, बकम् = बकासुरम्, असंशयम्=(न संशयः यस्मिन् तत्) निःसंशयम्, हन्यात्=मारयेत्। इदम् = वृत्तम्, गोप्यम्=रहस्यं गोपनीयम्, भवतु=वर्तताम् इति।

भावार्थ—मुझे पांच लड़के हैं। उनमें द्वितीय पुत्र भीमसेन को मन्त्रसिद्धि प्राप्त है। वह बकासुर को अवश्य मारेगा। यह रहस्य गुप्त रखो।

प्रतिपद्य प्रहृष्टेऽस्मिन् भीमसेनमुवाच सा।
याह्यरण्यं बकं हन्तुं त्रातुं ब्राह्मणबालकम् ॥ २४ ॥

अन्वय—अस्मिन् प्रतिपद्य प्रहृष्टे सा भीमसेनम् उवाच, बकं हन्तुं ब्राह्मणबालकं त्रातुम् अरण्यं याहि।

शब्दार्थ—अस्मिन्=विप्रे, प्रतिपद्य=स्वीकृत्य, प्रहृष्टे=प्रसन्ने, सति सा=कुन्ती, भीमसेनम्=वृकोदरम्, उवाच=कथयामास, बकम्=बकासुरम्, हन्तुम्=नाशयितुम्, ब्राह्मणबालकम्=विप्रशिशुम्, त्रातुम्=रक्षयितुम्, अरण्यम्=वनम्, याहि=गच्छ।

भावार्थ—इसे स्वीकारकर ब्राह्मण के आनन्दित होने पर कुन्ती ने भीम से कहा कि तुम ब्राह्मणबालक की रक्षा करने एवं बक राक्षस को मारने के लिए जंगल जाओ।

युधिष्ठिरस्त्ववोचत् तां किमिदं विहितं त्वया।
घातयित्वा सुतं रक्षा परस्याऽधर्मकारणम् ॥ २५ ॥

अन्वय—युधिष्ठिरः तु तां अवोचत् त्वया इदं किं विहितम्? सुतं घातयित्वा परस्य रक्षा अधर्मकारणम् [अस्ति]।

शब्दार्थ—युधिष्ठिरः तु = धर्मसुतः तु, ताम् = कुन्तीम्, अवोचत् = कथयामास, त्वया = भवत्या, इदम्=कार्यम्, किम्=किमर्थं, विहितम्= कृतम्?, सुतम्=पुत्रम्, घातयित्वा=मारयित्वा, परस्य=अन्यस्य, रक्षा = रक्षणम्, अधर्मकारणम्=पापस्य मूलम् [अस्ति=वर्तते]।

भावार्थ—युधिष्ठिर ने अपनी माँ कुन्ती से पूछा—तुमने यह क्या कर डाला? अपने पुत्र का वध करके दूसरे की रक्षा करना कोई धर्म नहीं, अधर्म ही है।

कुन्त्यब्रवीत् तं मा वादीर्धर्म्यं विप्रस्य रक्षणम्।
वयं सुखोषिताश्चात्र तं हत्वा भीम एष्यति ॥ २६ ॥

अन्वय—कुन्ती तम् अब्रवीत् [त्वम् एवं] मा वादीः, विप्रस्य रक्षणं धर्म्यम्, च अत्र वयं सुखोषिताः, भीमः तं हत्वा एष्यति।

शब्दार्थ—कुन्ती = पाण्डवमाता, तं=युधिष्ठिरम्, अब्रवीत्=अवदत्। [त्वं=भवान्, एवं=इत्थम्], मा वादीः=मा ब्रूहि, विप्रस्य=ब्राह्मणस्य, रक्षणं=प्राणरक्षा, धर्म्यं (धर्मात् अनपेतम्, धर्मेण प्राप्यं वा)=धर्म-युक्तम्; च=तथा, अत्र=अस्मिन् एकचक्रानगरे, वयं=सर्वे पाण्डवाः अहं च, सुखोषिताः (सुखेन उषिताः)=सुखपूर्वकं निवसामः; भीमः=पवनतनयः, तम्=बकासुरं, हत्वा=मारयित्वा, एष्यति=प्राप्स्यति।

भावार्थ—कुन्ती ने युधिष्ठिर से कहा कि तुम ऐसा मत कहो, ब्राह्मण

की प्राण-रक्षा धर्म का काम है। हम लोग यहाँ आनन्द से रहते हैं, भीम उसे मारकर आयेगा।

इति तं बोधयित्वाऽसौ भीमं प्रैरयदुन्मदम्।
स गत्वा विपिनं रक्षो हतवान् नगरार्तिदम्॥ २७॥

अन्वय—असौ इति तं बोधयित्वा उन्मदं भीमं प्रैरयत्। सः विपिनं गत्वा नगरार्तिदं रक्षः हतवान्।

शब्दार्थ—असौ=कुन्ती, इति=एवम्, तं=युधिष्ठिरं, बोधयित्वा=ज्ञापयित्वा, उन्मदम् (उत्=उद्गतः मदः यस्य सः उन्मदः तम्) उन्मत्तम्, भीमं=पवनतनयं, प्रैरयत्=प्रेरितवती। सः=भीमः विपिनं=वनं, गत्वा=प्राप्य, नगरार्तिदम् (नगरस्य आर्तिः नगरार्तिः तां ददाति इति नगरार्तिदः तं)=एकचक्रावासिनां कष्टदायकम्, रक्षः=राक्षसम् बकम्, हतवान्=अमारयत्।

भावार्थ—कुन्ती ने इस प्रकार युधिष्ठिर को समझाकर उन्मत्त भीम को राक्षसवधार्थ उद्यत किया। उसने जंगल जाकर नगरवासियों को पीड़ा देनेवाले बकासुर का वध किया।

अथ तत्र वसन्तस्ते श्रुत्वा द्रुपदमन्दिरे।
वीर्यशुल्कं सुतोद्वाहं ययुर्धौम्यपुरोहिताः॥ २८॥

अन्वय—अथ तत्र वसन्तः ते द्रुपदमन्दिरे वीर्यशुल्कं सुतोद्वाहं श्रुत्वा धौम्यपुरोहिताः ययुः।

शब्दार्थ—अथ=बकासुरवधानन्तरम्, तत्र=तस्यां एकचक्रानगर्याम्, वसन्तः=निवासं कुर्वन्तः, ते=मातृसमवेताः पाण्डवाः, द्रुपदमन्दिरे=(द्रुपदस्य मन्दिरं द्रुपदमन्दिरं तस्मिन्)=पाञ्चालनरेशस्य प्रासादे, वीर्यशुल्कम्=(वीर्यं शुल्कं यस्य सः वीर्यशुल्कः तम्) पराक्रमशुल्कम्, सुतोद्वाहम्=(सुतायाः उद्वाहः सुतोद्वाहः तम्) कृष्णायाः परिणयम्,

श्रुत्वा=आकर्ण्य, धौम्यपुरोहिताः = (धौम्यः पुरोहितः येषां ते)पुरोहितेन धौम्यमहर्षिणा सहिताः, ययुः=जग्मुः ।

भावार्थ – बकासुर के वध के पश्चात् वहाँ रहते हुए पाण्डवों ने सुना कि पाञ्चालनरेश द्रुपद के राज महल में उनकी कन्या कृष्णा का विवाह शूरता के मूल्य पर होने जा रहा है। तदनन्तर वे महर्षि धौम्य पुरोहित के साथ वहाँ पहुँचे ।

प्राप्य तन्नगरं गेहे कुलालस्याऽवसन् क्वचित् ॥ २९ ॥

आययुस्तत्र राजानो नानादिग्भ्यः सहस्रशः ।

दुर्योधनाद्याः कृष्णाद्याः स्वयंवरदिदृक्षया ॥ ३० ॥

अन्वय—[ते] तन्नगरं प्राप्य क्वचित् कुलालस्य गेहे अवसन् । तत्र स्वयंवरदिदृक्षया नानादिग्भ्यः सहस्रशः दुर्योधनाद्याः कृष्णाद्याः राजानः आययुः ।

शब्दार्थ—[ते=पाण्डवाः], तन्नगरं=(तस्य नगरं) द्रुपदनगरं, प्राप्य=आगत्य, क्वचित्=कस्मिंश्चित् , कुलालस्य=कुम्भकारस्य, गेहे=गृहे, अवसन्=निवसन्ति स्म । तत्र=द्रुपदनगरे, स्वयंवरदिदृक्षया = (द्रष्टुम् इच्छा दिदृक्षा, स्वयंवरस्य दिदृक्षा स्वयंवरदिदृक्षा, तया) स्वयंवरदर्शनेच्छया, नानादिग्भ्यः=(नाना च ताः दिशः च नानादिशः, ताभ्यः)=विविधेभ्यः ग्रामनगरेभ्यः, सहस्रशः=सहस्रसंख्याकाः, दुर्योधनाद्याः=(दुर्योधनः आद्यः येषां ते) दुर्योधनप्रभृतयः कौरवाः, कृष्णाद्याः =(कृष्णः आद्यः येषां ते) श्रीकृष्णप्रमुखाः यादवाः, राजानः=भूपालाः, आययुः=आगच्छन् ।

भावार्थ—पाण्डव उस द्रुपदपुरी में पहुँच कर किसी कुम्हार के घर रहने लगे । वहाँ स्वयंवर देखने की इच्छा से चारों दिशाओं से दुर्योधन आदि कौरव और श्रीकृष्ण आदि यादव राजा आये ।

विषय	पृष्ठ-संख्या
घटोत्कचवध, द्रुपद, विराट और द्रोण की मृत्यु, अश्वत्थामा का नर-नारायणज्ञान (१३७—१४६)	६५—७१
१६. **कर्णपर्व** : कर्ण का सेनापतित्व, दुःशासन-वध, शल्य का सारथित्व, कर्ण-वध (१५०—१५३)	७१—७२
२०. **शल्यपर्व** : शल्य का सेनापतित्व, उसका वध, दुर्योधन का भीम से युद्ध व पराजय (१५४—१५८)	७३—७५
२१. **सौप्तिकपर्व** : अश्वत्थामा की नीचता, द्रौपदी-विलाप, ब्रह्मास्त्र-प्रयोग, मणिहरण (१५६—१६३)	७५—७७
२२. **स्त्रीपर्व** : युधिष्ठिर द्वारा श्राद्ध-तर्पण, राज्यप्राप्ति (१६४)	७८
२३. **शान्तिपर्व-अनुशासन पर्व** : युधिष्ठिर का निर्वेद, भीष्मोपदेश (१६५)	७८
२४. **अश्वमेधपर्व** : अश्वमेध यज्ञ (१६६)	७६
२५. **आश्रमवासिकपर्व** : युधिष्ठिर का वन प्रस्थान, विदुर आदि की मृत्यु, उनकी अन्त्येष्टि (१६७—१७०)	७६—८०
२६. **मौसलपर्व** : यादवकुल-नाश, श्रीकृष्ण-प्रयाण (१७१—१७२)	८१
२७. **महाप्रास्थानिकपर्व** : परीक्षित को राज्य-प्राप्ति, पाण्डवों की हिमालय-यात्रा, पाण्डव पतन, युधिष्ठिर-परीक्षा (१७३—१७८)	८२—८४
२८. **स्वर्गारोहणपर्व** : देवराज की माया; युधिष्ठिर का सदेह स्वर्गगमन, अक्षय सुखप्राप्ति (१७६—१८६)	८५—८८

॥ श्रीः ॥

भारत-कथा

पाण्डुर्नामाऽभवद् राजा कुरुवंशे गुणोज्ज्वलः ।
मुनिशापादसौ त्यक्त्वा राज्यं वनमवाप ह ।
कुन्ती माद्री च पत्न्यौ द्वे तेन सार्धं वनं गते ॥ १ ॥

बालतोषिणी-व्याख्या

वाग्देवतावतारार्णां कविशेखरशोभिनाम् ।
पूज्यपितृव्य-तैलङ्ग-श्रीगङ्गाधरशास्त्रिणाम् ॥ १ ॥
आश्रित्य भारतकथां जगन्नाथः सुधीवरः ।
टीकां शिशुहितां कुर्वे सरलां बालतोषिणीम् ॥ २ ॥

अन्वय—कुरुवंशे गुणोज्ज्वलः पाण्डुः नाम राजा अभवत् । असौ मुनिशापात् राज्यं त्यक्त्वा वनम् अवाप ह । कुन्ती माद्री च द्वे पत्न्यौ तेन सार्धम् वनं गते ।

शब्दार्थ—कुरुवंशे = (कुरूणां वंशः कुरुवंशः तस्मिन्) कुरुकुले, गुणोज्ज्वलः = (गुणैः उज्ज्वलः) शौर्यौदार्यादिभिः प्रकाशमानः, पाण्डुः नाम = एतन्नाम्ना प्रसिद्धः, राजा = नृपः अभवत् = अवर्तत । असौ = पाण्डुराजः, मुनिशापात् = (मुनेः शापः मुनिशापः तस्मात्) हरिणवेष-धारिणः किन्दमर्षेः आक्रोशात् , राज्यं = हस्तिनापुरराज्यम् , त्यक्त्वा = परित्यज्य, वनम् = अरण्यम् , अवाप = अगच्छत् , ह इत्यैतिह्यार्थकम् । कुन्ती = कुन्तिभोजकन्या, माद्री च = मद्रेश्वरस्य शल्यस्य कन्या च, द्वे = उभे, पत्न्यौ = भार्ये, तेन = पाण्डुना, सार्धम् = समम्, वनम् = अटवीम्, गते = अगच्छताम् ।

भावार्थ—कुरुकुल में शूरता, उदारता आदि गुणों से भूषित पाण्डु नामक एक राजा था। वह हरिणवेषधारी किन्दम ऋषि के

स्वयंवरे समेतांस्तानवादीद् द्रुपदात्मजः ॥ ३० ॥
सज्यं कृत्वा धनुरिदं बाणैर्लक्ष्यं भिनत्तिः यः ।
तस्मै देया स्वसा मेऽद्य तद्यतध्वं नृपोत्तमाः ॥ ३१ ॥

अन्वय—द्रुपदात्मजः स्वयंवरे समेतान् तान् अवादीत् । यः धनुः सज्यं कृत्वा बाणैः इदं लक्ष्यं भिनत्ति, अद्य मे स्वसा तस्मै देया, तत् नृपोत्तमाः यतध्वम् ।

शब्दार्थ—द्रुपदात्मजः (आत्मनः जातः आत्मजः, द्रुपदस्य आत्मजः)= द्रुपदस्य पुत्रः धृष्टद्युम्नः स्वयंवरे=स्वयंवराख्ये विवाहे समवेतान्=एकत्रीभूतान्, तान्=भूपालान्, अवादीत् = उवाच । यः= नरः, धनुः=चापम्, सज्यं=सन्नद्धम्, कृत्वा=विधाय, बाणैः=शरैः, इदं= दृश्यम्, लक्ष्यं=वेध्यम्, भिनत्ति=छिनत्ति, अद्य=अधुना, मे=मम, स्वसा= भगिनी कृष्णा, तस्मै=पुरुषाय, देया = प्रदातव्या । तत्=तस्मात्कारणात्, नरोत्तमाः=(नरेषुः उत्तमाः, तत् सम्बुद्धौ) हे राजानः, यतध्वम्=प्रयत्नं कुरुत ।

भावार्थ—द्रुपदपुत्र धृष्टद्युम्न ने स्वयंवर में एकत्रित राजाओं से कहा कि जो पुरुष इस धनुष को सन्नद्धकर बाणों से इस लक्ष्य का वेध करेगा, आज उसके साथ मेरी बहन कृष्णा का विवाह किया जायगा । अतः राजाओ आप इस प्रयत्न में लग जायँ ।

श्रुत्वैतदुत्थिताः केचिन्न शेकुश्चापकर्षणे ।
केचिदुत्थापने यत्ता जानुभ्यामवनीं गताः ॥ ३२ ॥

अन्वय—एतत् श्रुत्वा केचित् उत्थिताः, [किन्तु] चापकर्षणे न शेकुः, केचित् उत्थापने यत्ताः जानुभ्याम् अवनीं गताः ।

शब्दार्थ—एतत्=धृष्टद्युम्नस्य वचनम्, श्रुत्वा=आकर्ण्य, केचित्=केचन राजानः, उत्थिताः=उदतिष्ठन्, [किन्तु=परन्तु], चापकर्षणे=(चापस्य कर्षणं चापकर्षणं तस्मिन्) धनुषः आकर्षणे, न शेकुः=न समर्थाः बभूवुः । केचित् = अपरे राजानः, उत्थापने=धनुषः उत्तोलने, यत्ताः = कृतप्रयत्नाः, जानुभ्याम्, अवनीं=भूतलं, गताः=प्राप्ताः ।

भावार्थ—यह सुनकर कुछ राजा उठे, परन्तु धनुष को अपनी ओर खींच न सके। दूसरे राजाओंने धनुष को ऊपर उठाने का प्रयत्न किया, परन्तु उन्होंने घुटने टेक दिये।

कर्णे तत्कृष्टुमनसि धृष्टद्युम्नोऽवदद् भवान्।
सम्बन्धार्हो न सूतत्वाच्छ्रुत्वेदं स न्यवर्तत ॥ ३३ ॥

अन्वय—कर्णे तत्कृष्टुमनसि धृष्टद्युम्नः अवदत्, भवान् सूतत्वात् सम्बन्धार्हः न। सः इदं श्रुत्वा न्यवर्तत।

शब्दार्थ—कर्णे=राधेये, तत्कृष्टुमनसि=(तत्कृष्टुं मनः यस्य सः तत्कृष्टुमनाः, तस्मिन्) तद्धनुः आकृष्टुम् उद्यते सति, धृष्टद्युम्नः= द्रुपदात्मजः, अवदत्=जगाद, भवान्=त्वम्, सूतत्वात्=(सूतस्य भावः सूतत्वं तस्मात्) सारथेः पुत्रत्वात्, सम्बन्धार्हः =(सम्बन्धस्य अर्हः) सम्बन्धयोग्यः, न =नाऽसि। सः = कर्णः इदं=वचनं, श्रुत्वा=आकर्ण्य, न्यवर्तत =प्रत्यागच्छत्।

भावार्थ—कर्ण वह धनुष खींचने के लिए उद्यत हुए। तब धृष्टद्युम्न ने कहा—'आप सारथी के पुत्र हैं, अतः आप से विवाहसम्बन्ध नहीं हो सकता'। कर्ण यह वचन सुनकर लौट गये।

अथाऽर्जुनो ब्रह्मवृन्दादुत्थाय कृतवान् धनुः।
सज्जं विव्याध लक्ष्यं च लेभे च द्रुपदात्मजाम् ॥ ३४ ॥

अन्वय—अथ अर्जुनः ब्रह्मवृन्दात् उत्थाय धनुः सज्जं कृतवान्, च लक्ष्यं विव्याध, च द्रुपदात्मजाम् लेभे।

शब्दार्थ—अथ = कर्णनिवर्तनानन्तरम्, अर्जुनः=पार्थः, ब्रह्मवृन्दात्= ब्राह्मणानां समुदायात्, उत्थाय= उत्थानं कृत्वा, धनुः=चापम्, सज्जं= सन्नद्धम्, कृतवान्=अकरोत्, च= तथा, लक्ष्यं = वेध्यं चक्रस्थितं मत्स्यं, विव्याध=बेधयति स्म, च = तथा, द्रुपदात्मजाम्=यज्ञसेनकन्यां कृष्णां, लेभे=प्राप्नोत्।

भावार्थ—कर्ण के लौटने के पश्चात् अर्जुन ने ब्राह्मणों के बीच से उठकर अपना धनुष सज्ज किया और लक्ष्य को वेध दिया। फिर उसने द्रुपदपुत्री कृष्णा को प्राप्त किया।

युद्धाय संस्थितान् राज्ञो दुर्योधनमुखानसौ।
सभीमोऽवारयद् दोषान् विवेकः इव सागमः॥ ३५॥

अन्वय—सागमः विवेक दोषान् इव सभीमः असौ युद्धाय संस्थितान् दुर्योधनमुखान् राज्ञः अवारयत्।

शब्दार्थ—सागमः = (आगमेन सहितः) शास्त्रयुक्तः, विवेकः= विचारः, दोषान् = अविवेकादीन्, इव = यथा, सभीमः = भीमसेन-समवेतः, असौ = अर्जुनः, युद्धाय=युद्धं कर्तुम्, संस्थितान् = वर्तमानान्, दुर्योधनमुखान्=दुर्योधनप्रमुखान्, अवारयत् = न्यरोधयत्।

भावार्थ—जिस प्रकार आगम के सहित विवेक दोषों को दूर करता है, उसी प्रकार भीम के सहित अर्जुन ने युद्ध करने के लिए उद्यत दुर्योधन आदि राजाओं को रोका।

अथानीय द्रुपदजां स्ववेश्म कुरुपुङ्गवाः।
मात्रेऽर्पयन्नुवाचैषा समं भुङ्ध्वमिमामिति॥ ३६॥

अन्वय—अथ कुरुपुङ्गवाः द्रुपदजां स्ववेश्म आनीय मात्रे अर्पयन्। एषा उवाच इमां समं भुङ्ध्वम् इति।

शब्दार्थ—अथ = युद्धात् दुर्योधनादीनां निवारणानन्तरम्, कुरु-पुङ्गवाः=(कुरुषु पुङ्गवाः) कुरुकुले श्रेष्ठाः पाण्डुपुत्राः, द्रुपदजाम्= कृष्णाम्, स्ववेश्म = आत्मनो गृहम्, आनीय = समानीय, मात्रे = जनन्यै कुन्त्यै, अर्पयन्=समर्पितवन्तः। एषा=कुन्ती, उवाच=जगाद, इमाम्= द्रौपदीम्, समं=समानरूपेन, भुङ्ध्वम्=उपभोगं कुरुध्वम् इति।

भावार्थ—दुर्योधन आदि राजाओं को युद्ध से पराङ्मुख करने के उपरान्त पाण्डव द्रौपदी को लेकर अपने घर आये और उसे माता को

समर्पित किया। माँ ने उनसे कहा कि 'तुम सभी भाई इसका समान रूपसे उपभोग करो'।

एकस्या बहुपत्नीत्वं कथं स्यादिति संशये।
व्यासोऽवदत् वराच्छम्भोर्नात्र दोषो भवेदिति ॥ ३७ ॥

अन्वय—एकस्याः बहुपत्नीत्वं कथं स्यात् इति संशये [सति] व्यासः अवदत् शम्भोः वरात् अत्र दोषः न भवेत् इति।

शब्दार्थ—एकस्याः=अद्वितीयायाः स्त्रियः, बहुपत्नीत्वं= (बहुनां पत्नी बहुपत्नी तस्याः भावः तत्त्वम्) अनेकेषां पुंसां भार्यात्वं, कथं=केन प्रकारेण, स्यात् = भवेत् ? इति = इत्थं, संशये=विकल्पे [सति] व्यासः=सत्यवती-पुत्रः, अवदत्=उवाच, शम्भोः=शङ्करस्य, वरात्=आशीर्वादात्, अत्र= समोपभोगे, दोषः = दूषणम् , न भवेत्=न वर्तेत इति।

भावार्थ—एक स्त्री अनेक पुरुषों की पत्नी कैसे हो सकती है ? यह शंका उठने पर पाण्डवों से भगवान् वेदव्यास ने कहा कि द्रौपदी को शंकर से इसी प्रकार का वर मिला है, अतः ऐसा करने में कोई दोष नहीं है।

तच्छ्रुत्वा द्रुपदो वाक्यं सर्वपत्नीं चकार ताम्।
धृतराष्ट्रोऽपि तद् राज्यमिन्द्रप्रस्थे व्यसर्जयत् ॥ ३८ ॥

अन्वय—द्रुपदः तद् वाक्यं श्रुत्वा तां सर्वपत्नीं चकार। धृतराष्ट्रः अपि तत् राज्यं इन्द्रप्रस्थे व्यसर्जयत्।

शब्दार्थ—द्रुपदः=यज्ञसेनः, तद् = व्यासोक्तम् , वाक्यम् = वचनम् , श्रुत्वा = आकर्ण्य, तां = द्रौपदीं, सर्वपत्नीं=(सर्वेषां पत्नी सर्वपत्नी तां) पञ्चपाण्डवानां पत्नीं, चकार=अकरोत्। धृतराष्ट्रः अपि = विचित्रवीर्यपुत्रः अपि, तत् राज्यं=पाण्डवानां राज्यं, इन्द्रप्रस्थे=तन्नाम्नि नगरे, व्यसर्जयत्= समर्पितवान्।

भावार्थ—द्रुपद ने व्यास की बात सुनकर द्रौपदी का विवाह पाँचों पांडवों के साथ कर दिया। धृतराष्ट्र ने पाण्डवों को इन्द्रप्रस्थ का राज्य समर्पित किया।

तत्र तान्नारदोऽभ्येत्य कथां सुन्दोपसुन्दयोः।
वर्णयन्नवदत् प्रेम्णा मा वो भूत् स्त्रीकृते कलिः॥ ३९॥

अन्वय—तत्र नारदः अभ्येत्य सुन्दोपसुन्दयोः कथां वर्णयन् प्रेम्णा तान् अवदत्, स्त्रीकृते वः कलिः मा भूत्।

शब्दार्थ—तत्र=तस्मिन् पाण्डवप्रासादे, नारदः=देवर्षिः, अभ्येत्य=आगत्य, सुन्दोपसुन्दयोः=एतन्नामकयोः राक्षसयोः, कथां=वृत्तम्, वर्णयित्वा=कथयित्वा, प्रेम्णा=स्नेहेन, तान्=पाण्डवान्, अवदत्=उवाच, स्त्रीकृते=द्रौपदीनिमित्तं, वः=युष्माकं, कलिः=कलहः, मा भूत् न भवतु।

भावार्थ—वहाँ नारद ने आकर पांडवों को सुन्द और उपसुन्द की कथा सुनायी और प्रेमपूर्वक उनसे कहा कि 'द्रौपदी के लिए कहीं आप भाईयों में कलह न हो'।

ते प्रत्यशृण्वन्नेकैकं तिष्ठत्सु सहाऽनया।
तिष्ठत्स्वस्मासु यः पश्येत् सः चरेद्धायनं व्रतम्॥ ४०॥

अन्वय—ते प्रत्यशृण्वन् अनया सह प्रतिवर्षं एकैकं तिष्ठत्सु अस्मासु यः पश्येत् सः हायनं व्रतं चरेत्।

शब्दार्थ—ते=पाण्डवाः, प्रत्यशृण्वन्=प्रतिज्ञातवन्तः, अनया=द्रौपद्या, सह=सार्धं, प्रतिवर्षं प्रत्येकवर्षे, एकैकं=पृथक् पृथक्, तिष्ठत्सु=स्थितेषु, अस्मासु=भ्रातृषु, यः=भ्राता, पश्येत्=अवलोकयेत्, सः=भ्राता, हायनं व्रतं=वार्षिकं व्रतम्, चरेत्=आचरेत्।

भावार्थ—पाण्डवों ने प्रतिज्ञा की कि एक-एक भाई क्रम से एक

एक वर्षतक द्रौपदी के साथ रहेगा। इस अवधि में जो अपने भाई के साथ द्रौपदी का दर्शन भी करेगा, वह वार्षिक वनवासव्रत करेगा।

श्रुत्वैतन्नारदे हृष्टे याते धामार्जुनो नृपम्।
कदाचिद् वीक्ष्य सस्त्रीकं वनयानोत्सुकोऽभवत् ॥ ४१ ॥

अन्वय—एतत् श्रुत्वा हृष्टे नारदे द्यां याते अर्जुनः कदाचित् नृपं सस्त्रीकं वीक्ष्य वनयानोत्सुकः अभवत्।

शब्दार्थ—एतत्=प्रतिश्रुतं, श्रुत्वा=आकर्ण्य, हृष्टे=आनन्दिते, नारदे=देवर्षौ, द्यां, = स्वर्गम्, याते = गते सति, अर्जुनः = कौन्तेयः, कदाचित् = एकस्मिन् दिने, नृपं = राजानं युधिष्ठिरं, सस्त्रीकं = द्रौपद्या समेतम्, वीक्ष्य=दृष्ट्वा, वनयानोत्सुकः = (वने यानं वनयानं तस्मिन् उत्सुकः) अरण्यं गन्तु इच्छुकः, अभवत्=जायते स्म।

भावार्थ—नारद यह प्रतिज्ञा सुनकर आनंदित हुए और स्वर्ग चले गये। एक बार अर्जुन ने राजा युधिष्ठिर को द्रौपदी के साथ देखा और वे वन जाने के लिए उद्यत हो गये।

युधिष्ठिरः स्नेहपाशैर्बद्धः सत्यमयैश्च तैः।
न मोक्तुं न निषेद्धुं च पारयन् विह्वलोऽभवत् ॥ ४२ ॥

अन्वय—युधिष्ठिरः स्नेहपाशैः च सत्यमयैः तैः बद्धः मोक्तुं न [पारयन्] च निषेद्धुं न पारयन् विह्वलः अभवत्।

शब्दार्थ—युधिष्ठिरः = धर्मराजः, स्नेहपाशैः = (स्नेहस्य पाशः स्नेहपाशः तैः) प्रेमबन्धनैः, च=तथा, सत्यमयैः = (सत्येन प्रचुराः सत्यमयाः तैः) सत्यप्रचुरैः, तैः, = वचनैः, बद्धः = संजातबन्धनः, मोक्तुं =विसर्जितुम् न [पारयन्]=न शक्नुवन्, च=तथा, निषेद्धुं=निवारयितुं न पारयन्, विह्वलः = व्याकुलः, अभवत्= बभूव।

भावार्थ—युधिष्ठिर जिस प्रकार स्नेहपाशसे बंधे थे, उसी प्रकार सत्य-

प्रतिज्ञा से भी बंधे थे। अतः वे न तो उसे वन भेज पाते थे और न वन जाने से रोक सकते थे। फलतः वे अत्यन्त व्याकुल हुए।

कृच्छ्रेण लब्धानुमतिर्वनं गत्वाऽर्जुनोऽप्यथ।
उलूपीं चोलतनयां चोपयेमे स्मरार्दिताम्॥ ४३॥

अन्वय—अथ अर्जुनः अपि कृच्छ्रेण लब्धानुमतिः वनं गत्वा स्मरार्दितां चोलतनयाम् उलूपीं च उपयेमे।

शब्दार्थ—अथ = युधिष्ठिरे व्याकुले सति, अर्जुनः अपि, कृच्छ्रेण = सायासम्, लब्धानुमतिः = [लब्धा अनुमतिः येन सः] प्राप्तानुमोदनः, वनं = अरण्यम्, गत्वा = प्राप्य, स्मरार्दिताम् = [स्मरेण अर्दिता स्मरार्दिता ताम्] कामपीडिताम्, चोलतनयाम् = (चोलस्य तनया ताम्) चोलराजकन्याम्, उलूपीम् = तन्नाम्नीं युवतीं च, उपयेमे = परिणीतवान्।

भावार्थ—इसके बाद अर्जुन जिस किसी प्रकार आज्ञा पाकर वन गये। वहाँ उन्होंने कामपीडित चोलराज की कन्या उलूपी से विवाह किया।

सुभद्रां द्वारकापुर्या जहार भगिनीं हरेः।
चीर्णव्रतश्चाभिमन्युमलब्धास्यां समं हरेः॥ ४४॥

अन्वय—[सः] द्वारकापुर्याः हरेः भगिनीं सुभद्रां जहार, च चीर्णव्रतः अस्यां हरेः समम् अभिमन्युं अलब्ध।

शब्दार्थ—[सः = अर्जुनः], द्वारकापुर्याः = तन्नामकात् नगरात्, हरेः = श्रीकृष्णस्य, भगिनीम् = सहोदराम्, सुभद्राम्, जहार = अपाहरत्। च = तथा, चीर्णव्रतः = [चीर्णं व्रतं येन सः] सञ्चितव्रतः, अस्याम् = सुभद्रायाम्, हरेः = विष्णोः, समम् = तुल्यम्, अभिमन्युम् = एतन्नामकं पुत्रम्, अलब्ध = प्राप्तवान्।

भावार्थ—अर्जुन ने द्वारकापुरी से श्रीकृष्ण की बहन सुभद्रा का अप

हरण किया। व्रत समाप्त होने पर अर्जुन को सुभद्रा से विष्णुसदृश अभिमन्यु नामक पुत्ररत्न की प्राप्ति हुई।

युधिष्ठिराद्याः क्रमशो द्रौपद्यां लेभिरे सुतान्।
स्वसमानसमाँल्लोके महाभूतान् गुणा इव ॥ ४६ ॥

अन्वय—गुणाः लोके महाभूतान् इव युधिष्ठिराद्याः क्रमशः द्रौपद्यां स्वसमानसमान् सुतान् लेभिरे।

शब्दार्थ—गुणाः=रूपरसगन्धस्पर्शशब्दतन्मात्राः, लोके = विश्वे, महाभूतान् = पावकजलक्षितिसमीरगगनरूपान्, इव = यथा, युधिष्ठिराद्याः =युधिष्ठिरभीमार्जुननकुलसहदेवाः, क्रमशः, द्रौपद्यां = कृष्णायां, स्वसमानसमान्=(स्वस्य समानाः स्वसमानाः, ते च ते समाः स्वसमानसमाः तान्) आत्मसदृशान् सज्जनान्, सुतान् = पुत्रान् प्रतिबिन्ध-सुतसोमश्रुत-कर्मन्-शतानीक-श्रुतसेनान्, लेभिरे=प्राप्तवन्तः।

भावार्थ—जिस प्रकार विश्व में रूप, रस, गंध, स्पर्श, शब्दतन्मात्राओं से क्रमशः अग्नि, जल, पृथ्वी, वायु, आकाशरूप महाभूतों की सृष्टि होती है, उसी प्रकार युधिष्ठिर, भीम, अर्जुन, नकुल और सहदेव ने द्रौपदी द्वारा क्रम से अपने समान सज्जन प्रतिबिंध, सुतसोम, श्रुतकर्मा, शतानीक और श्रुतसेन नामक पुत्र प्राप्त किये।

कदाचिद् कृष्णसहितो यमुनामर्जुनो ययौ।
ग्रीष्मे जलविहारार्थं तत्राऽद्राक्षीच्च तापसम् ॥ ४७ ॥

अन्वय – कदाचित् ग्रीष्मे अर्जुनः कृष्णसहितः यमुनां जलविहारार्थं ययौ, च तत्र तापसं अद्राक्षीत्।

शब्दार्थ—कदाचित्=एकदा, ग्रीष्मे=तपनर्तौ, अर्जुनः = पार्थः, कृष्णसहितः = श्रीकृष्णेन समवेतः, यमुनां=कालिन्दीं नदीं, जलविहारार्थं = (जले विहारः जलविहारः, जलविहारः अर्थः प्रयोजनं यस्मिन् तत्) जले

क्रीडितुं, ययौ=जगाम । च तत्र = यमुनातटे, तापसं=मुनिम् एकम्, अद्राक्षीत्=अवलोकयत् ।

भावार्थ—एक बार ग्रीष्म ऋतु में अर्जुन कृष्ण के साथ जल-विहार के लिए यमुनातट आये और वहाँ एक तपस्वी को देखा ।

याचमानेऽशनं तस्मिन् प्रतिश्रुत्य जगाद तम् ।
को भवानिति सोऽप्याह खाण्डवार्थ्यस्मि पावकः ॥ ४७ ॥

अन्वय—तस्मिन् अशनं याचमाने प्रतिश्रुत्य [सः] तं जगाद कः भवान् इति । सः अपि आह अहं पावकः खाण्डवार्थी अस्मि ।

शब्दार्थ—तस्मिन्=तापसे, अशनं=भोजनं, याचमाने=प्रार्थ्यमाने सति, प्रतिश्रुत्य = प्रत्याकर्ण्य, [सः = याचकः], तम्=अर्जुनं, जगाद= कथयामास, कः भवान् इति = कः त्वम् इति । सः अपि = तापसः अपि, आह = जगाद, अहं पावकः = अग्निः, खाण्डवार्थी=खाण्डववनप्रार्थी, अस्मि = भवामि ।

भावार्थ—उस तपस्वी द्वारा भोजन की याचना किये जाने पर उसे स्वीकार करते हुए अर्जुन ने उससे पूछा—'आप कौन हैं ?' उसने उत्तर दिया—'मैं अग्नि हूँ, खाण्डववन को खाने को उत्सुक हूँ' ।

ततोऽर्जुनो मुदा युक्तो गाण्डीवमिषुधी रथम् ।
प्राप्यास्मान् तं दहेत्यूचे वारयिष्यन् पुरन्दरम् ॥ ४८ ॥

अन्वय—ततः मुदा युक्तः इषुधीः अर्जुनः गाण्डीवं रथम् अस्मात् प्राप्य पुरन्दरं वारयिष्यन् तं दह इति ऊचे ।

शब्दार्थ—ततः=अनन्तरम्, मुदा=प्रेम्णा, युक्तः=संपन्नः, इषुधीः = सज्जितबाणः, अर्जुनः=कौन्तेयः गाण्डीवं=धनुः, रथं च, अस्मात्=पावकात् प्राप्य=लब्ध्वा, पुरन्दरं = इन्द्रं, वारयिष्यन्=रोधयिष्यन्, तम्=खाण्डवम्, दह = प्रज्वालय, इति = एवम्, ऊचे = कथितवान् ।

भावार्थ—अनन्तर आनंदित अर्जुन ने बाण को सजकर अग्निदेव से

गाण्डीव एवं रथ पाकर अग्निदेव से कहा कि खाण्डववन को जलाओ।

वनं दहति शक्रोऽस्मिन्नवर्षत्तक्षकप्रियः।
छत्रीकृत्य शरव्रातं तच्चावारयदर्जुनः ॥ ४९ ॥

अन्वय—अस्मिन् वनं दहति शक्रः तक्षकप्रियः [सन्] अवर्षत्, च अर्जुनः शरव्रातं छत्रीकृत्य तत् अवारयत्।

शब्दार्थ—अस्मिन् = पावके, वनं=खाण्डवम्, दहति = भस्मीकुर्वति [सति], शक्रः=इन्द्रः, तक्षकप्रियः=तक्षकनागस्य हितचिन्तकः सन्, अवर्षत्=वृष्टिम् अकरोत्; अर्जुनः=कौन्तेयः, शरव्रातं=बाणसमूहम्, छत्रीकृत्य = आतपत्रीकृत्य, तत्=वर्षणम्, अवारयत्=न्यरोधयत्।

भावार्थ—अग्निदेव द्वारा खाण्डव वन जलाते समय इन्द्र ने नागराज तक्षक की रक्षा के लिए वर्षा की। अर्जुन ने बाणसमूह का छाता बनाकर वृष्टि को रोक दिया।

सुरैः साकं युद्ध्यमानं विजित्येन्द्रं सबालकाम्।
तक्षकस्त्रीं प्रचिच्छेद बालस्तस्या व्यमुच्यत ॥ ५० ॥

अन्वय—[अर्जुनः] सुरैः साकं युद्ध्यमानम् इन्द्रं विजित्य सबालकाम् तक्षकस्त्रीं प्रचिच्छेद; तस्याः बालः व्यमुच्यत।

शब्दार्थ—[अर्जुनः], सुरैः = देवैः, साकं = सह, युद्ध्यमानम् = युद्धं कुर्वाणं, इन्द्रम् = शक्रम्, विजित्य=जित्वा सबालकाम् = (बालकेन सहिता सबालका ताम्)=पुत्रयुक्ताम्, तक्षकस्त्रीं=(तक्षकस्य स्त्री तक्षकस्त्री ताम्) तक्षकपत्नीं, प्रचिच्छेद = प्रच्छिनत्ति स्म। तस्याः = तक्षकस्त्रियः, बालः = पुत्रः, व्यमुच्यत = विशेषेण मुच्यते स्म।

भावार्थ—अर्जुन ने देवों के साथ युद्ध करनेवाले इन्द्र को जीतकर बालक के साथ तक्षकपत्नी का छेदन किया। किन्तु उसका बालक बच गया।

मयं शरणमापन्नमरक्षद् दाहसंकटात्।
प्रीतो वह्निश्च दत्ताशीर्ययौ तौ चापतुः पुरीम्॥ ५१॥

अन्वय—[अर्जुनः] शरणम् आपन्नं मयं दाहसंकटात् अरक्षत्; च प्रीतः वह्निः दत्ताशीः ययौ; तौ च पुरीम् आपतुः।

शब्दार्थः—[अर्जुनः], शरणम् आपन्नम् = शरणागतम्, मयम् = असुरविशेषम्, दाहसंकटात् = (दाहस्य संकटं दाहसंकटम्, तस्मात्) प्रज्वलनापत्तेः, अरक्षत् = ररक्ष। च, प्रीतः = सन्तुष्टः, वह्निः = अग्निः, दत्ताशीः = (दत्ता आशीः येन सः) विहिनाशीर्वादः, ययौ = जगाम; तौ च = कृष्णार्जुनौ, पुरीं = द्वारकानगरीम्, आपतुः = प्रापतुः।

भावार्थ—अर्जुन ने शरणागत मयासुर को आग में जलने से बचाया। अग्निदेव सन्तुष्ट हुए और आशीर्वाद देकर चले गये। फिर अर्जुन और श्रीकृष्ण भी द्वारकापुरी को लौट गये।

मयः सभां मणिमयीं युधिष्ठिरकृतेऽकरोत्।
तत्र तं राजसूयेन यष्टुं प्रोवाच नारदः॥ ५२॥

अन्वय—मयः युधिष्ठिरकृते मणिमयीं सभाम् अकरोत्, नारदः तं तत्र राजसूयेन यष्टुं प्रोवाच।

शब्दार्थः—मयः, युधिष्ठिरकृते = धर्मराज निमित्तम्, मणिमयीं = रत्नप्रचुराम्, सभाम् = आस्थानमण्डपम्, अकरोत् = अरचयत्। नारदः = देवर्षिः, तम् = युधिष्ठिरम् तत्र = मणिमय्यां सभायाम्, राजसूयेन = यज्ञविशेषेण, यष्टुं = यागं कर्तुं, प्रोवाच = उवाच।

भावार्थ—मयासुर ने युधिष्ठिर के लिए रत्नजटित सभामण्डप का निर्माण किया। नारद ने युधिष्ठिर को वहाँ राजसूय यज्ञ करने के लिए प्रेरित किया।

स च संमन्त्र्य कृष्णेन कृष्णं भीमार्जुनौ तथा।
जरासन्धवधार्थाय मगधान् प्राहिणोन्नृपः॥ ५३॥

अन्वय–सः च नृपः कृष्णेन संमन्त्र्य कृष्णं तथा भीमार्जुनौ जरासन्धवधार्थाय मगधान् प्राहिणोत् ।

शब्दार्थ––सः च नृपः = युधिष्ठिरः, कृष्णेन = भगवता श्रीकृष्णेन, संमन्त्र्य = मन्त्रणां कृत्वा, कृष्णं = वासुदेवम् , तथा , भीमार्जुनौ = पवनपुत्रपार्थौ, जरासन्धवधार्थाय (जरासन्धस्य वधः जरासन्धवधः, तस्य अर्थः जरासन्धवधार्थः, तस्मै) जरासन्धस्य वधं कर्तुं, मगधान् = देशविशेषान्, प्राहिणोत् = प्रैषयत् ।

भावार्थ—युधिष्ठिर ने कृष्ण के साथ मन्त्रणा करके श्रीकृष्ण, भीम और अर्जुनको जरासन्ध के वध के लिए मगध भेजा ।

स्नातकच्छद्मना गत्वा ते चाभिपेदन्त तं रणम् ।
भीमेन स चिरं युद्ध्वा हतोऽभूत् तत्सुतश्च राट् ॥ ५४ ॥

अन्वय—ते च स्नातकच्छद्मना गत्वा तं रणम् अभिपेदन्त । सः भीमेन चिरं युद्ध्वा हतः अभूत् , च तत्सुतः राट् [अभूत्]।

शब्दार्थ—ते च = श्रीकृष्णभीमार्जुनाः स्नातकच्छद्मना = (स्नातकानां छद्म स्नातकच्छद्म, तेन) ब्रह्मचारिवेषेण, गत्वा = प्राप्य, तं = जरासन्धम्, रणम्=युद्धम्, अभिपेदन्त=अयाचन्त । सः=जरासन्धः, भीमेन =पवनतनयेन सह , चिरम्=बहुकालपर्यन्तम् , युद्ध्वा = युद्धं कृत्वा, हतः अभूत्=अमृणोत् । च, तत्सुतः=जरासन्धपुत्रः शिशुपालः, राट् = राजा [अभूत्]।

भावार्थ—श्रीकृष्ण, भीम एवं अर्जुन ने स्नातक के वेष में पहुँचकर जरासन्ध से युद्ध की माँग की । जरासंध भीम के साथ युद्ध करते हुए वीरगति को प्राप्त हुआ और उसका पुत्र शिशुपाल राजा बना ।

हृष्टेषु स्वपुरीं प्राप्तेष्वेषु राजा दिशां जये ।
भ्रातॄन् विससृजे ते च निर्जिग्युः सर्वराजकम् ॥ ५५ ॥

अन्वय—राजा हृष्टेषु एषु स्वपुरीं प्राप्तेषु दिशां जये भ्रातॄन् विससृजे । ते च सर्वराजकम् निर्जिग्युः ।

शब्दार्थ—राजा = युधिष्ठिरः, हृष्टेषु = प्रसन्नेषु, एषु = श्रीकृष्णभीमार्जुनेषु, स्वपुरीं (स्वेषां पुरी स्वपुरी, ताम्) = आत्मनः पुरीम् इन्द्रप्रस्थनाम्नीम्, प्राप्तेषु=आगतेषु सत्सु, दिशां=चतसृणां काष्ठानाम्, जये =विजये, भ्रातॄन् = भीमार्जुननकुलसहदेवबन्धून्, विससृजे = व्यसर्जयत् । ते च = भ्रातरः, सर्वराजकम् = (सर्वेषां राज्ञां समाहारः सर्वराजकम्) सकलान् नृपान्, निर्जिग्युः = विजितवन्तः ।

भावार्थ—धर्मराज युधिष्ठिर ने श्रीकृष्ण, अर्जुन और भीम के प्रसन्नतापूर्वक लौटने पर दिग्विजय के लिए भाइयों को भेजा । उन्होंने सभी राजाओं को जीत लिया ।

अथ राजा राजसूये सम्यक् सन्तर्प्य देवताः ।
भीष्मानुमत्या तस्यान्ते वासुदेवमरीरधत् ॥ ५६ ॥

अन्वय—अथ राजा राजसूये देवताः सम्यक् सन्तर्प्य भीष्मानुमत्या तस्य अन्ते वासुदेवम् अरीरधत् ।

शब्दार्थ—अथ=दिग्विजयानन्तरम्, राजा = युधिष्ठिरः, राजसूये = तन्नामके यागे, देवताः = देवान्, सन्तर्प्य = आराध्य, भीष्मानुमत्या = (भीष्मस्य अनुमतिः भीष्मानुमतिः, तया) भीष्माचार्यस्य अनुज्ञया, तस्य = राजसूययागस्य, अन्ते = समाप्तौ, वासुदेवम् = श्रीकृष्णम्, अरीरधत् = अपूजयत् ।

भावार्थ—दिग्विजय के पश्चात् राजा युधिष्ठिर ने देवताओं की भलीभाँति पूजा करके भीष्म पितामह की अनुमति से यज्ञ के अन्त में भगवान् श्रीकृष्ण की पूजा की ।

शिशुपालोऽसहन्नेतदश्लीलं व्याहरन् वचः ।
कृष्णचक्रेण चक्रेऽसौ वैवस्वतपुरातिथिः ॥ ५७ ॥

अन्वय—शिशुपालः एतत् असहन् अश्लीलं वचः व्याहरत्, असौ कृष्णचक्रेण वैवस्वतपुरातिथिः चक्रे ।

शब्दार्थ—शिशुपालः=जरासन्धपुत्रः, एतत्=वासुदेवाराधनम्, असहन्=सहनम् अकुर्वन्, अश्लीलम्=अभद्रम्, वचः=वचनम्, व्याहरत्=अवोचत्। असौ=शिशुपालः, कृष्णचक्रेण=(कृष्णस्य चक्रं तेन) सुदर्शनेन, वैवस्वतपुरातिथिः=(विवस्वतः=सूर्यस्य, अपत्यं पुमान् वैवस्वतः=यमराजः, तस्य पुरं वैवस्वतपुरम्, तस्य अतिथिः, यमपुरी-प्राघूर्णिकः, चक्रे=कृतः, इत्यर्थः।

भावार्थ—शिशुपाल ने श्रीकृष्ण की पूजा को सहन न करते हुए अभद्र वचन कहना आरम्भ किया। श्रीकृष्ण ने उसे अपने सुदर्शन चक्र से यमपुरी का अतिथि बनाया।

दुर्योधनो मणिमयीं सभामेतां विलोकयन्।
पपात स्खलितो भ्रान्त्या ततो द्रुपदजाऽहसत् ॥ ५८ ॥

अन्वय—दुर्योधनः एतां मणिमयीं सभां विलोकयन् भ्रान्त्या स्खलितः पपात, ततः द्रुपदजा अहसत्।

शब्दार्थ—दुर्योधनः = सुयोधनः, एतां = मयासुरनिर्मितां, मणिमयीं = रत्नखचितां, सभां = आस्थानमण्डपम्, विलोकयन्=अवलोकयन्, भ्रान्त्या=भ्रमेण, स्खलितः=च्युतः, पपात = अपतत्; ततः = अनन्तरं, द्रुपदजा=द्रौपदी; अहसत् = उपाहसत्।

भावार्थ—दुर्योधन ने वह रत्नखचित सभामण्डप देखा और भ्रम से लड़खड़ाकर गिर पड़ा। यह देख द्रौपदी हँसने लगी।

तेन मानी दूयमानो मर्तुकामो न्यवार्यत।
द्यूते धर्मात्मजं निःस्वं पश्येति शकुनेर्गिरा ॥ ५९ ॥

अन्वय—तेन दूयमानः मर्तुकामः मानी [सः] द्यूते धर्मात्मजं निःस्वं पश्य इति शकुनेः गिरा न्यवार्यत।

शब्दार्थ—तेन = द्रौपद्याः हासेन, दूयमानः = दुःखमापन्नः, मर्तुकामः=मरणोद्यतः, मानी=अभिमानी, [सः=दुर्योधनः], द्यूते=

द्यूतक्रीडायाम्, धर्मात्मजं=युधिष्ठिर, निःस्वं=निर्धनं, पश्य=अवलोकय, इति=एवं, शकुनेः=स्वमातुलस्य, गिरा=वाचा, न्यवार्यत=न्यरुद्ध्यत।

भावार्थ—द्रौपदी के उपहास से दुर्योधन दुःखी हुआ और उसने आत्महत्या करने का निश्चय किया। परन्तु अपने मामा शकुनि के इस आश्वासन से कि 'तुम द्यूत द्वारा युधिष्ठिर को निर्धन देखोगे', अपना यह विचार त्याग दिया।

अथ पित्रा स संमन्त्र्य छलेनानाय्य धर्मजम्।
द्यूतमारब्ध शकुनिः क्षणादस्याहरद्धनम्॥ ६०॥

अन्वय—अथ सः पित्रा [सह] संमन्त्र्य छलेन धर्मजम् आनाय्य शकुनिः द्यूतम् आरब्ध; क्षणात् अस्य धनम् आहरत्।

शब्दार्थ—अथ—आश्वासनानन्तरं, सः=दुर्योधनः, पित्रा=जनकेन धृतराष्ट्रेण [सह], संमन्त्र्य=विचार्य, धर्मजम्=युधिष्ठिरम्, छलेन=कपटेन, आनाय्य=आनयनं कारयित्वा, द्यूतम् आरब्ध=द्यूतम् आरभत। शकुनिः=दुर्योधनमातुलः, अस्य=युधिष्ठिरस्य, धनं=संपत्तिम्, क्षणात=तत्कालम्, आहरत्=अपाहरत्।

भावार्थ—अनन्तर दुर्योधन ने पिता के साथ मन्त्रणा करके कपट से युधिष्ठिर को बुलाया और उनके साथ द्यूत प्रारंभ किया। शकुनि ने क्षणभर में उसकी संपत्ति लूट ली।

हृतराज्यो दैववलाद् भ्रातॄन् पत्नीं च स ग्लहम्।
कुर्वन् व्यजीयतात्मानं तथा कुर्वन् क्षणात् पुनः॥ ६१॥

अन्वय—सः दैववलात् हृतराज्यः भ्रातॄन् पत्नीं च ग्लहम् कुर्वन् व्यजीयत, तथा पुनः क्षणात् आत्मानं [ग्लहं] कुर्वन् व्यजीयत।

शब्दार्थ—सः=युधिष्ठिरः, दैववलात्=(दैवस्य बलम् दैवबलं तस्मात्) दुर्भाग्यवशात्, हृतराज्यः=(हृतं राज्यं यस्य सः) अपगतराज्यः, भ्रातॄन्=बन्धून्, पत्नीं=भार्यां द्रौपदीं च, ग्लहम्=पणम्, कुर्वन्=

विदधन्, व्यजीयत=विजितः। तथा = पुनः, क्षणात्=तत्कालं, आत्मानं=स्वं, ग्लहं कुर्वन्=पणं विदधन्, व्यजीयत=आत्मानमपि हारयामास।

भावार्थ—दुर्भाग्य से युधिष्ठिर का राज्य द्यूत में चला गया। अनन्तर उन्होंने भाइयों को, पत्नी को और अन्त में स्वयं को भी जुए में खो दिया।

दुःशासनो द्रुपदजामथ स्त्रीधर्मिणीं सदः।
भ्रातुर्निदेशादानिन्ये नग्नां कर्तुमियेष च ॥ ६२ ॥

अन्वय— अथ दुःशासनः भ्रातुः निदेशात् स्त्रीधर्मिणीं द्रुपदजाम् सदः आनिन्ये, च नग्नां कर्तुं इयेष।

शब्दार्थ—अथ = युधिष्ठिरविजयानन्तरं, दुःशासनः = दुर्योधनानुजः, भ्रातुः=दुर्योधनस्य, निदेशात्=आदेशात्, स्त्रीधर्मिणीं=स्त्रियः धर्मः अस्यां अस्ति इति स्त्रीधर्मिणी ताम्) रजस्वलाम्, द्रुपदजां - द्रौपदीं, सदः= सभाम्, आनिन्ये =आनीतवान्, च नग्नां=विवस्त्रां, कर्तुं=विहितुं, इयेष= ऐच्छत्।

भावार्थ—दुःशासन ने अपने ज्येष्ठ भ्राता दुर्योधन के निर्देश से रजस्वला द्रौपदी को सभा में उपस्थित किया और उसे विवस्त्र करना चाहा।

अथ सभ्येषु मूकेषु सा हरिं शरणार्थिनी।
चुक्रोश प्रादुरासीच्च वस्त्रपङ्क्तिः सहस्रशः ॥ ६३ ॥

अन्वय - अथ सभ्येषु मूकेषु [सत्सु] शरणार्थिनी हरिं सा चुक्रोश; च सहस्रशः वस्त्रपङ्क्तिः प्रादुरासीत्।

शब्दार्थ— अथ = सभायां द्रौपद्याः आनयनानन्तरं, सभ्येषु=सभाजनेषु, मूकेषु = अवदत्सु सत्सु, शरणार्थिनी = (शरणं अर्थ्यते यया सा)शरणोत्सुका, सा=द्रौपदी, हरिं=श्रीकृष्णं, चुक्रोश=आहूतवती, च=तथा सहस्रशः=असंख्याः वस्त्रपङ्क्तिः = वसनमालिका, प्रादुरासीत्=प्रादुर्बभूव।

भावार्थ--अनन्तर सभा में उपस्थित राजाओं के मूक रहने पर शरणार्थिनी द्रौपदी ने श्रीकृष्ण का आह्वान किया और उसके शरीर पर हजारों साड़ियाँ प्रकट हो गयीं।

दुःशासने चिरं हृत्वा वासांसि विरते सति।
भीमोऽमुष्य रणे रक्तं पाताऽस्मीत्याह रोषितः॥ ६४॥

अन्वय--दुःशासने वासांसि चिरं हृत्वा विरते सति भीमः रणे अमुष्य रक्तं पाता अस्मि इति रोषितः आह।

शब्दार्थ--दुःशासने=दुर्योधनभ्रातरि, वासांसि=वस्त्राणि, चिरं = बहुकालपर्यन्तं, हृत्वा=अपहृत्य, विरते सति=शान्ते सति, भीमः = पवन-तनयः, रणे = युद्धे, अमुष्य = दुःशासनस्य, रक्तं=रुधिरं, पाता = पानकर्ता, अस्मि, इति = एवं, रोषितः = क्रुद्धः, आह = उवाच।

भावार्थ--दुःशासन द्वारा बहुत देर तक वस्त्र अपहरण कर श्रान्त हो विरत हो जाने पर भीम ने क्रुद्ध हो प्रतिज्ञा की--'मैं युद्ध में दुःशासन का रक्त-पान करूँगा'।

सहस्ततालं कर्णेन हसन्तं च सुयोधनम्।
अत्र तिष्ठेति कृष्णां च दर्शयन्तं स्वसक्थिनी॥ ६५॥
शशाप द्रौपदी मृत्युस्तवात्रैव भवेदिति।
तदूरुभङ्गं च रणे प्रतिजज्ञे वृकोदरः॥ ६६॥

अन्वय--द्रौपदी कर्णेन [सह] सहस्ततालं 'अत्र तिष्ठ' इति स्वसक्थिनी च कृष्णां दर्शयन्तं सुयोधनं शशाप तव अत्रैव मृत्युः भवेत् इति, च वृकोदरः रणे तदूरुभङ्गं प्रतिजज्ञे।

शब्दार्थ--द्रौपदी=कृष्णा, कर्णेन = राधेयेन [सह], सहस्ततालं= करतालपूर्वकं, हसन्तं = अट्टहासं कुर्वन्तं, 'अत्र = क्रोडे, तिष्ठ = उपविश', इति = एवं, स्वसक्थिनी आत्मनः ऊरुयुगलम्, कृष्णां = द्रौपदीं च दर्शयन्तं, सुयोधनं = दुर्योधनं, शशाप=शापितवती, तव = भवतः,

अत्रैव=ऊरुयुगले एव, मृत्युः = मरणं, भवेत् = जायेत इति । वृकोदरः = भीमः रणे=युद्धे, तदूरुङ्गम्=(तस्य ऊरू तदूरू तयोः भङ्गः तदूरुभङ्गः तं) सुयोधनस्य ऊरुविभाजनं, प्रतिजज्ञे = प्रतिज्ञातवान् ।

भावार्थ—कर्ण के साथ सुयोधन ने ताली पीटते हुए द्रौपदी का उपहास किया और 'यहाँपर बैठो' ऐसा कहते हुए उसे अपनी जंघा दिखायी । द्रौपदी ने उसे शाप दिया कि इसी जंघा के कारण तुम मरोगे । भीम ने भी युद्ध में उसके ऊरु-भङ्ग की प्रतिज्ञा की ।

अर्जुनश्च रणे कर्णं हन्तास्मीत्यवदन् मुहुः ।
धृतराष्ट्रोऽथ राज्यार्धं दत्वा साम्ना प्रसाद्य च ।
व्यसर्जयद् धर्मसुतं शकुनिः पुनराह्वयत् ॥ ६७ ॥

अन्वय—च मुहुः अर्जुनः अवदत् रणे कर्णं हन्तास्मि इति, अथ धृतराष्ट्रः राज्यार्धं दत्वा च साम्ना प्रसाद्य धर्मसुतं व्यसर्जयत्, पुनः शकुनिः आह्वयत् ।

शब्दार्थ—च = तथा, मुहुः = भूयः, अर्जुनः = धनञ्जयः, अवदत्= अकथयत्, रणे = युद्धे, कर्णं = राधेयम्, हन्तास्मि = नाशयिता भविष्यामि, इति । अथ = अनन्तरं, धृतराष्ट्रः, राज्यार्धं = राज्यस्य अर्ध-भागम्, दत्वा = समर्प्य, च = पुनः, साम्ना = सामनीत्या, प्रसाद्य = सन्तोष्य, धर्मसुतं = युधिष्ठिरं, व्यसर्जयत्=प्रास्थापयत् । पुनः = भूयः, शकुनिः=गान्धारीभ्राता, [तम्] आह्वयत् = आकारयत् ।

भावार्थ—फिर अर्जुन ने भी प्रतिज्ञा की कि मैं कर्ण को युद्ध में मारूँगा । इसके बाद धृतराष्ट्र ने पाण्डवों को राज्य का आधा भाग देकर और सामनीति से सन्तुष्ट कर धर्मराज को इन्द्रप्रस्थ के लिए विदा किया । लेकिन फिर से शकुनि ने बुलाया ।

द्वादशाब्दान् वने वासमज्ञातैश्चैकहायनम् ।
ग्लहं प्रकल्प्य सोऽदीव्यद् विजिग्ये च युधिष्ठिरम् ॥ ६८ ॥

अन्वय—सः वने द्वादशाब्दान् वासम् च अज्ञातैः एकहायनं [वासं एवं] ग्लहं प्रकल्प्य अदीव्यत्, च युधिष्ठिरं विजिग्ये।

शब्दार्थ—सः = शकुनिः, वने = अरण्ये, द्वादशाब्दान्=द्वादशवर्षाणि, वासं = निवासम्, च = तथा, अज्ञातैः = प्रच्छन्नरूपैः, एकहायनं = एकवर्षं, [वासं=निवासम्, एवंविधम्], ग्लहं=पणम्, प्रकल्प्य=निर्धार्य, अदीव्यत्=द्यूतम् अरचयत् इत्यर्थः, च = तथा युधिष्ठिरं = धर्मसुतं, विजिग्ये=अजयत्।

भावार्थ—शकुनि ने बारह वर्ष वनवास और एक वर्ष के अज्ञातवास की बाजी लगाकर द्यूत खेला और युधिष्ठिर को जीत लिया।

अथ धर्मात्मजः कुन्तीं विन्यस्य विदुरालये।
द्वारवत्यां सुतान् न्यस्य भ्रातृपत्नीसमन्वितः।
वनं ययौ सत्यरतो रिपुघातक्षमोऽपि सन्॥ ६६॥

अन्वय—अथ धर्मात्मजः विदुरालये कुन्तीं विन्यस्य, सुतान् द्वारवत्यां न्यस्य, भ्रातृपत्नीसमन्वितः रिपुघातक्षमः अपि सत्यरतः [सन्] वनं ययौ।

शब्दार्थ—अथ=अनन्तरम्, धर्मात्मजः=युधिष्ठिरः, विदुरालये=विदुरगृहे, कुन्तीम्=स्वमातरम्, विन्यस्य=संस्थाप्य, सुतान्=पाण्डवपुत्रान्, द्वारवत्यां=द्वारकापुर्याम्, न्यस्य=संस्थाप्य, भ्रातृपत्नीसमन्वितः=(भ्रातरश्च पत्नी च भ्रातृपत्न्यः, ताभिः समन्वितः) भीमादिभिः अनुजैः पत्न्या द्रौपद्या च सहितः, रिपुघातक्षमः=[रिपुणां घातः रिपुघातः, तत्र क्षमः] शत्रुवधसमर्थः अपि, सत्यरतः=सत्यपरायणः सन्, वनम्=काननम्, ययौ = जगाम।

भावार्थ—इसके बाद सत्यनिष्ठ युधिष्ठिर विदुर के घर माता कुन्ती को छोड़ और अपने पुत्रों को द्वारकापुरी में रखकर शत्रुओं का वध करने में समर्थ होते हुए भी भाइयों और पत्नी के साथ वन गये।

सहस्रशश्चाऽनुगतान् विप्रानापद्गतोऽप्यसौ ।
सूर्यमाराध्य तद्दत्तपात्र्युत्थान्नैरतर्पयत् ॥ ७० ॥

अन्वय—आपद्गतः अपि असौ सूर्यम् आराध्य च तद्दत्तपात्र्युत्थान्नैः सहस्रशः अनुगतान् विप्रान् अतर्पयत् ।

शब्दार्थ—आपद्गतः अपि = विपत्तिग्रस्तोऽपि, असौ = युधिष्ठिरः, सूर्यं = भास्करम्, आराध्य = सम्पूज्य, तद्दत्तपात्र्युत्थान्नैः = (तेन दत्ता तद्दत्ता, सा चासौ पात्री तद्दत्तपात्री, तस्याः उत्थानि तद्दत्तपात्र्युत्थानि तानि च तानि अन्नानि तद्दत्तपात्र्युत्थान्नानि तैः) सूर्यप्रदत्तपात्रोपस्थितैः अन्नैः, सहस्रशः = सहस्रसंख्यया, अनुगतान् = अनुसृतान्, विप्रान् = ब्राह्मणान्, अतर्पयत् = सन्तोषयामास ।

भावार्थ—धर्मराज आपत्तिग्रस्त थे । तथापि सूर्य की आराधना से प्राप्त अक्षय्य पात्र द्वारा वे नित्य हजारों ब्राह्मणों को भोजन कराकर प्रसन्न रखते थे ।

भीमसात्यकिसाम्बाद्यैरनुमन्तुं रिपुक्षयम् ।
याच्यमानोऽपि तन्नैच्छत् केवलं धर्ममाश्रितः ॥ ७१ ॥

अन्वय—[सः] भीमसात्यकिसाम्बाद्यैः रिपुक्षयम् अनुमन्तुं याच्यमानः अपि तत् न ऐच्छत्, [यतः सः] केवलं धर्मम् आश्रितः ।

शब्दार्थ—[सः = युधिष्ठिरः], भीमसात्यकिसाम्बाद्यैः = (भीमश्च सात्यकिश्च साम्बश्च भीमसात्यकिसाम्बाः, ते च ते आद्याश्च भीमसात्यकिसाम्बाद्याः, तैः) = एतत्प्रमुखैः सेनानिभिः, रिपुक्षयं = शत्रुविनाशम्, अनुमन्तुं = अनुज्ञातुम्, याच्यमानः अपि = प्रार्थ्यमानः अपि, तत् = रिपुक्षयम्, न ऐच्छत् = न अवाञ्छत् । [यतः = यस्मात् कारणात्, सः = युधिष्ठिरः], केवलं धर्मम् = धर्ममात्रम्, आश्रितः = अधिष्ठितः, आसीत् इति शेषः ।

भावार्थ—भीम, सात्यकी, साम्ब आदि सेनापति यद्यपि युधिष्ठिर से शत्रुओं के विनाश की याचना करते थे, तथापि उन्होंने उसे स्वीकार नहीं किया, क्योंकि वे केवल धर्म पर चलते थे।

काम्यकद्वैतवनयोः सेवमानः शुचीन् मुनीन्।
उवास धर्मभूयिष्ठाः कथाः शृण्वन्नसौ सुखम्॥ ७२॥

अन्वय—असौ काम्यकद्वैतवनयोः शुचीन् मुनीन् सेवमानः धर्मभूयिष्ठाः कथाः शृण्वन् सुखम् उवास।

शब्दार्थ—असौ = युधिष्ठिरः, काम्यकद्वैतवनयोः = एतन्नामकयोः अरण्ययोः, शुचीन्=पुनीतान्, मुनीन्=ऋषीन्, सेवमानः = आराध्यमानः, धर्मभूयिष्ठाः = धर्मप्रचुराः कथाः=वार्ताः, शृण्वन्=आकर्णयन्, सुखम्= आनन्दपूर्वकम्, उवास=वसति स्म।

भावार्थ—युधिष्ठिर काम्यक एवं द्वैतवन के पवित्र मुनियों की पूजा करते और धर्मकथाएँ सुनते हुए वहाँ आनन्द से रहने लगे।

अथ व्यासाज्ञया राज्ञाऽर्जुनो मुक्तो हिमालयम्।
गत्वा पाशुपतास्त्राप्त्यै चिरमाराधयच्छिवम्॥ ७३॥

अन्वय—अथ व्यासाज्ञया राज्ञा मुक्तः अर्जुनः हिमालयं गत्वा पाशुपतास्त्राप्त्यै चिरं शिवम् आराधयत्।

शब्दार्थ—अथ = अनन्तरम्, व्यासाज्ञया = व्यासमहर्षेः आज्ञया, राज्ञा = नृपेण धर्मराजेन, मुक्तः=आज्ञप्तः, अर्जुनः = धनञ्जयः, हिमालयम्= नगाधिराजम्, गत्वा=प्राप्य, पाशुपतास्त्राप्त्यै=पाशुपतास्त्रस्य प्राप्तये, चिरं= बहुकालपर्यन्तम्, शिवं = शङ्करम्, आराधयत् = अपूजयत्।

भावार्थ—इसके बाद व्यास के निर्देशानुसार युधिष्ठिर ने अर्जुन को हिमालय जाने के लिए स्वीकृति दी। तदनुसार अर्जुन ने हिमालय में पहुँचकर पाशुपतास्त्र की प्राप्ति के लिए भगवान् शंकर की आराधना की।

अथ शम्भुः समागत्य किरातच्छद्मसंवृतः।
नियुद्ध्य तोषितस्तेन स्वात्मानं समदर्शयत् ॥ ७४ ॥

अन्वय—अथ किरातच्छद्मसंवृतः शम्भुः तेन [सह] नियुद्ध्य, तोषितः स्वात्मानं समदर्शयत्।

शब्दार्थ—अथ=शिव समाराधनानन्तरम्, किरातच्छद्मसंवृतः = (किरातस्य छद्म किरापच्छद्म, किरातच्छद्मना संवृतः) किरातवेषेण आवृतः, शम्भु = शङ्करः, समागत्य = संप्राप्य, तेन = अर्जुनेन, [सह=साकम्], नियुद्ध्य = युद्धं कृत्वा, तोषितः=प्रसादितः, स्वात्मानं= स्वस्वरूपम्, समदर्शयत्=दर्शितवान्।

भावार्थ—अनन्तर भगवान् शंकर ने किरात-वेष में आकर अर्जुन से युद्ध किया। उससे प्रसन्न होकर उन्होंने उसे दर्शन दिया।

दत्त्वा पाशुपतं याते पिनाकभृति मातलिः।
रथेन तं दिवं निन्ये तत्र दिव्यास्त्रमाप सः ॥ ७५ ॥

अन्वय—पिनकभृति पाशुपतं दत्त्वा याते [सति] मातलिः तं रथेन दिवं निन्ये, सः तत्र दिव्यास्त्रम् आप।

शब्दार्थ—पिनाकभृति=(पिनाकं = धनुर्विशेषम्, 'पिनाकोऽजगवं धनुः' इत्यमरः, बिभर्ति=धारयति इति पिनाकभृत्, तस्मिन्] शिवे, पाशुपतम्=अस्त्रविशेषम्, दत्त्वा=अर्पयित्वा, याते=गच्छति [सति]मातलिः= इन्द्रसारथिः, तम् = अर्जुनं दिवं=स्वर्गम्, निन्ये=नीतवान्। सः=अर्जुनः, तत्र=दिवि, दिव्यास्त्रम्=दिव्यायुधम्, आप=प्राप।

भावार्थ—भगवान् शंकर के पाशुपत अस्त्र देकर चले जाने पर मातलि अर्जुन को स्वर्ग ले गया। वहाँ उसने दिव्यास्त्र प्राप्त किये।

ऊर्वशीमिन्द्रसन्देशात् कामयानां स चाऽऽगताम्।
प्रत्याख्याय तया शप्तः षण्ढः स्या इति खिन्नया ॥ ७६ ॥

अन्वय—च सः इन्द्रसन्देशात् आगतां कामयानाम् ऊर्वशीं प्रत्याख्याय खिन्नया तया षण्ढः स्याः इति शप्तः ।

शब्दार्थ—च=तथा, सः=अर्जुनः, इन्द्रसन्देशात्=देवराजसन्देशात्, आगतां=समुपस्थिताम्, कामयानाम्=रमणाय इच्छन्तीम्, ऊर्वशीं=तन्नाम्नीं देवाङ्गनाम्, प्रत्याख्याय = निराकृत्य, खिन्नया=सञ्जातखेदया, तया=ऊर्वश्या, 'षण्ढः = नपुंसकः, स्याः=भवेः, इति=एवम्, शप्तः=अभिशप्तः ।

भावार्थ—स्वर्ग में इन्द्र के आदेश से ऊर्वशी अर्जुन का मनोरंजन करने के लिए आयी और उसपर अनुरक्त हो गयी । किन्तु अर्जुन ने उसका अस्वीकार कर दिया । फलतः खिन्न हो उर्वशी ने उसे षण्ढ होने का शाप दिया ।

समाश्वासयदिन्द्रस्तं शापोऽयं वत्स ते मुदे ।
अज्ञातवासे वसतः साह्यायैव भवेदिति ॥ ७७ ॥

अन्वय—इन्द्रः तं समाश्वासयत् वत्स ! अयं शापः ते मुदे [भवेत्], अज्ञातवासे वसतः [ते अयम्] साह्याय एव भवेत् इति ।

शब्दार्थ—इन्द्रः=देवराजः, तम् = अर्जुनम्, समाश्वासयत् = आश्वासयति स्म, वत्स = पुत्र !, अयम् = ऊर्वशीप्रदत्तः, शापः = षण्ढत्वरूपः, ते = तव, मुदे – सन्तोषाय [भवेत्] । अज्ञातवासे = अज्ञातरूपेण निवासे, वसतः=तिष्ठतः, [ते, अयम्=शापः], साह्याय एव= सहायतायै एव, भवेत् = जायेत इति ।

भावार्थ—इन्द्र ने अर्जुन को आश्वासन दिया कि 'वत्स ! ऊर्वशी द्वारा प्रदत्त षण्ढत्व का शाप तुम्हारे हित के लिए ही है । अज्ञातवास में यह तुम्हारा सहायक होगा ।

निवातकवचान् हत्वा कालकेयांश्च दानवान् ।
इन्द्रात् प्राप्तास्त्रविद्यायाः सोऽकरोद् गुरुदक्षिणाम् ॥ ७८ ॥

अन्वय –सः निवातकवचान् च कालकेयान् दानवान् हत्वा इन्द्रात् प्राप्तास्त्रविद्यायाः गुरुदक्षिणाम् अकरोत् ।

शब्दार्थ—सः = अर्जुनः, निवातकवचान्=[निवातानि कवचानि येषां ते निवातकवचाः, तान्] शस्त्राद्यभेद्यकवचान् , कालकेयान्=एतन्नामकान्, दानवान् = राक्षसान् , हत्वा = विनाश्य, इन्द्रात् , प्राप्तास्त्रविद्यायाः = (अस्त्राणां विद्या अस्त्रविद्या, प्राप्ता चासौ अस्त्रविद्या च प्राप्तास्त्रविद्या, तस्याः) स्वपितुः प्राप्तशस्त्रविद्यायाः, गुरुदक्षिणाम्=गुरवे दक्षिणाम्, अकरोत् = विहितवान् ।

भावार्थ –अर्जुन ने शस्त्रों से अभेद्य कवचों से आवृत कालकेय आदि दानवों को मारकर इन्द्र से प्राप्त शस्त्रविद्या की गुरुदक्षिणा चुकायी ।

एवमत्यद्भुतं वृत्तं कुर्वन् वत्सरपञ्चकम् ।
वसन् भ्रातृषु वृत्तं स्वं वक्तुं लोमशमैरयत् ॥ ७९ ॥

अन्वय - [सः] एवम् अत्यद्भुतं वृत्तं कुर्वन् वत्सरपञ्चकम् वसन् भ्रातृषु स्वं वृत्तं वक्तुं लोमशम् ऐरयत् ।

शब्दार्थ—[सः = अर्जुनः], एवं = पूर्वोक्तम् = अत्यद्भुतम् = अत्याश्चर्यकारकम् , वृत्तं = कार्यम् , कुर्वन् = विदधन् , वत्सरपञ्चकम् = पञ्च वर्षाणि, वसन् = निवसन् , भ्रातृषु = बन्धुषु युधिष्ठिरादिषु, स्वम् = आत्मीयम्, वृत्तं = इतिवृत्तम् वक्तुम् = गदितुम् , लोमशम् = एतन्नामानं मुनिम् , ऐरयत् = प्रैरयत् ।

भावार्थ—अर्जुन ने पांच वर्ष अन्यत्र रहकर इस प्रकार अत्यन्त आश्चर्यकारी कार्य करते हुए युधिष्ठिर आदि भाइयों को अपनी पुरुषार्थ-भरी बातें कह सुनाने के लिए लोमश मुनि को प्रेरित किया ।

लोमशाद् वृत्तमाकर्ण्य तस्य राजा युधिष्ठिरः ।
तीर्थयात्रां सहाऽनेन चक्रे भ्रात्रङ्गनायुतः ॥ ८० ॥

अन्वय--राजा युधिष्ठिरः लोमशात् तस्य वृत्तम् आकर्ण्य, भ्रात्रङ्गना-युतः [सन्] अनेन सह तीर्थयात्रां चक्रे ।

शब्दार्थ--राजा = नृपः, युधिष्ठिरः=धर्मराजः, लोमशात्=तन्नामकात् मुनेः, तस्य=अर्जुनस्य, वृत्तं=वार्ताम्, आकर्ण्य = श्रुत्वा, भ्रात्रङ्गना-युतः [सन्]=भीमादिबन्धुभिः पत्न्या द्रौपद्या च सहितः सन्, अनेन = लोमशमुनिना, सह = साकम्, तीर्थयात्रां=पुनीतक्षेत्रप्रवासम्, चक्रे = अकरोत् ।

भावार्थ--राजा युधिष्ठिर ने महर्षि लोमश से अर्जुन की कीर्ति सुनकर बन्धुओं, पत्नी एवं लोमश मुनि के साथ तीर्थयात्रा की ।

बदर्याश्रममासाद्य राजर्षेर्वृषपर्वणः ।
दर्शनेन परं तुष्यन् जगाम दिशमुत्तराम् ॥ ८१ ॥

अन्वय—[सः] बदर्याश्रमम् आसाद्य राजर्षेः वृषपर्वणः दर्शनेन परं तुष्यन् उत्तरां दिशं जगाम ।

शब्दार्थ—[सः=युधिष्ठरः], बदर्याश्रमम्=बदरिकाश्रमं धाम, आसाद्य = संप्राप्य, राजर्षेः वृषपर्वणः=राजयोगिनः वृषपर्वणः, दर्शनेन= अवलोकनेन, परम्=अत्यन्तम्, तुष्यन्=प्रसीदन्, उत्तरां दिशम्=कौबेरीं दिशम्, जगाम=ययौ ।

भावार्थ -- युधिष्ठिर बदरिकाश्रम पहुँचे । वहाँ राजयोगी वृषपर्वा का दर्शनकर अत्यन्त प्रसन्न हुए । वहाँ से वे उत्तर दिशा की ओर गये ।

कदाचिद् द्रौपदी पद्ममालोक्यालौकिकं मुदा ।
तदानेतुं बहुविधं भीमसेनमयाचत ॥ ८२ ॥

अन्वय—कदाचिद् द्रौपदी मुदा अलौकिकं पद्मम् आलोक्य तत् आनेतुं भीमसेनं बहुविधम् अयाचत ।

शब्दार्थ—कदाचित्=कस्मिंश्चित् समये, द्रौपदी=कृष्णा, मुदा = हर्षेण,

अलौकिकं = लोकोत्तरम्, पद्मं = कमलम्, आलोक्य=दृष्ट्वा, तत्=पद्मम्, आनेतुम्=सङ्गृहीतुम्, भीमसेनं=पवनतनयम्, बहुविधं = नानाप्रकारम्, अयाचत=प्रार्थयत्।

भ.वार्थ—एकबार द्रौपदी एक लोकोत्तर कमल देख अत्यन्त प्रसन्न हो उठी। उसने भीमसेन से उसे ले आने के लिए नाना प्रकार से प्रार्थना की।

भीमसेनस्तथेत्युक्त्वा व्रजन् पथि हनूमता।
दृष्टः स्वरूपं सन्दर्श्य विसृष्टोऽयाददुङ्मुखः॥ ८३॥

अन्वय—भीमसेनः तथा इति उक्त्वा पथि व्रजन्, हनूमता दृष्टः स्वरूपं सन्दर्श्य विसृष्टः उदङ्मुखः अयात्।

शब्दार्थ—भीमसेनः = वृकोदरः, तथा=एवम् अस्तु, इति = इदम्, उक्त्वा = कथयित्वा, पथि = मार्गे, व्रजन् = गच्छन्, हनुमता=मारुतिना, दृष्टः = अवलोकितः, स्वरूपम् = आत्मरूपम्, सन्दर्श्य=दर्शयित्वा, विसृष्टः= मुक्तः, उदङ्मुखः = उत्तराभिमुखः, अयात्=अगच्छत्।

भावार्थ—भीमसेन 'तथास्तु' कहकर वहाँ से निकले। रास्ते में हनुमान् ने उन्हें देखा और अपना स्वरूप दिखलाया। अनन्तर भीमसेन उसने आज्ञा लेकर उत्तराभिमुख चले गये।

ततः पुष्करिणीं वीक्ष्य सौगन्धिककवतीमसौ।
अवगाह्याऽलुनात् पद्मान्यरोधि स च रक्षकैः॥ ८४॥

अन्वय—ततः असौ सौगन्धिकवतीं पुष्करिणीं वीक्ष्य अवगाह्य पद्मानि अलुनात् च रक्षकैः सः अरोधि।

शब्दार्थ—ततः=तदनन्तरम्, असौ=वृकोदरः, सौगन्धिकवतीम्=कल्हार-संपत्नाम्, पुष्करिणीं, = सरोवरम्, वीक्ष्य = दृष्ट्वा, अवगाह्य = प्रविश्य, पद्मानि=कमलानि, अलुनात्=अचिनोत्। च, रक्षकैः=प्रहरिभिः, सः= भीमसेनः, अरोधि = अरुद्ध्यत।

भावार्थ—इसके बाद भीमसेन ने कमलों से परिपूर्ण सरोवर को देखकर उसमें प्रवेश किया और कमल तोड़ने लगे। रक्षकों ने उन्हें रोका।

अवमत्य वचस्तेषां हरन् पद्मान्ययोधि तैः।
जघान तांश्च गदया मदयावकितेक्षणः॥ ८५॥

अन्वय—[सः] तेषां वचः अवमत्य पद्मानि हरन् तैः अयोधि, च मदयावकितेक्षणः गदया तान् जघान।

शब्दार्थ—[सः = भीमसेनः], तेषां = रक्षकाणाम्, वचः = वचनम्, अवमत्य=तिरस्कृत्य, पद्मानि=कमलानि, हरन्=आनयन्, तैः=रक्षकैः, अयोधि=युयुधे। च=तथा, मदयावकितेक्षणः = [मदेन यावकिते ईक्षणे यस्य सः] मदिरारक्तनयनः, गदया=आयुधविशेषेण, तान्=रक्षकान्, जघान= अहनत्।

भावार्थ—भीमसेन ने उनके वचनों की उपेक्षाकर कमलों को तोड़ते हुए रक्षकों से युद्ध किया और क्रोध से लाल-लाल आँखें करते हुए गदा से उन रक्षकों का वध किया।

तान् विजित्य तटे तिष्ठन् ददर्श सघटोत्कचान्।
भ्रातॄन् सजानीन् द्रौपद्यै ददौ सौगन्धिकानि च॥ ८६॥

अन्वय—[सः] तान् विजित्य तटे तिष्ठन् सघटोत्कचान् सजानीन् भ्रातॄन् ददर्श, च द्रौपद्यै सौगन्धिकानि ददौ।

शब्दार्थ—[सः=वृकोदरः], तान्=रक्षकान्, विजित्य=जित्वा, तटे=तीरे, तिष्ठन्=निवसन्, सघटोत्कचान् = हिडिम्बापुत्रसहितान्, सजानीन्= सपत्नीकान्, भ्रातॄन्=बन्धून्, ददर्श=अवलोकयामास। च=तथा, द्रौपद्यै= कृष्णायै, सौगन्धिकानि=कल्हारकमलानि, ददौ=प्रायच्छत्।

भावार्थ—भीमसेन ने उन रक्षकों को जीतकर तट पर खड़े हो घटोत्कचसहित, सपत्नीक अपने बंधुओं को देखा और द्रौपदी को कमल समर्पित किये।

कदाचित् सङ्गरे यक्षान् मणिभद्रं च मारयन् ।
सान्त्वपूर्वं कुबेरेण प्रीयमाणेन तुष्टुवे ॥ ८७ ॥

अन्वय—[सः] कदाचित् सङ्गरे यक्षान् मणिभद्रं च मारयन्, प्रीयमाणेन कुबेरेण सान्त्वपूर्वं तुष्टुवे ।

शब्दार्थ—[सः=भीमसेनः], कदाचित्=एकदा, सङ्गरे=युद्धे, यक्षान्=किंपुरुषान्, मणिभद्रं च = तन्नामकं पुरुषं च, मारयन्=हनन्, प्रीयमाणेन =सन्तुष्टेन, कुबेरेण=यक्षराजेन, सान्त्वपूर्वं = सान्त्वनापूर्वकम्, तुष्टुवे = प्रसीद्यते स्म ।

भावार्थ—एकबार भीमसेन ने युद्ध में मणिभद्र एवं यक्षों को मारा, जिससे सन्तुष्ट हो कुबेर ने सान्त्वनापूर्वक उसे प्रसन्न किया ।

अथाऽर्जुनं दिवः प्राप्तमभिनन्द्य कुरूत्तमाः ।
साकं तेन वनं द्वैतं प्रापुः श्रुतशिवाहवाः ॥ ८८ ॥

अन्वय—अथ श्रुतशिवाहवाः कुरूत्तमाः दिवः प्राप्तम् अर्जुनम् अभिनन्द्य तेन साकं द्वैतं वनं प्रापुः ।

शब्दार्थ—अथ=अनन्तरम्, श्रुतशिवाहवाः=(श्रुतं शिवेन सह आहवं यैस्ते) आकर्णितशङ्करयुद्धाः, कुरूत्तमाः=कुरुवंशश्रेष्ठाः पाण्डवाः, दिवः= स्वर्गात्, प्राप्तम्=आगतम्, अर्जुनं=धनञ्जयम्, अभिनन्द्य=प्रशस्य, तेन=अर्जुनेन, साकम्=सार्धम्, द्वैतम्=एतन्नामकम्, वनम्=काननम्, प्रापुः=ईयुः ।

भावार्थ—इसके बाद शिव के साथ युद्ध में अर्जुन की विजय सुनकर संतुष्ट युधिष्ठिरादि पाण्डवों ने स्वर्ग से लौटे हुए अर्जुन का स्वागत किया और उसके साथ द्वैतवन गये ।

दुर्योधनः कदाचित् तान् दर्शयिष्यन् स्वसंपदम् ।
घोषयात्रामिषात् प्राप द्वैतं योधानुजैर्वृतः ॥ ८९ ॥

अन्वय--कदाचित् दुर्योधनः तान् स्वसम्पदं दर्शयिष्यन् घोषयात्रा-मिषात् योधानुजैः वृतः [सन्] द्वैतं प्राप ।

शब्दार्थ--कदाचित्=एकदा, दुर्योधनः=सुयोधनः, तान्=पाण्डवान्, स्वसम्पदम्=निजसम्पत्तिम्, दर्शयिष्यन्=दर्शयितुमिच्छन्, घोषयात्रा-मिषात्=आभीरपल्ली-गमनच्छलात्, योधानुजैः=(योधाश्च ते अनुजाश्च योधानुजाः, तैः) वीरैः कनिष्ठभ्रातृभिः, वृतः=वेष्टितः, द्वैतम्=द्वैताख्यम् अरण्यम्, प्राप=जगाम ।

भावार्थ—एकबार दुर्योधन पाण्डवों को अपना वैभव दिखलाने के लिए गोशाला देखने के बहाने वीर छोटे भाइयों के साथ द्वैतवन आया ।

तत्र रन्तुं सरस्तीरं चित्रसेनः समागतः ।
तद्भटैर्वार्यमाणस्तान् जघान विशिखैः शितैः ॥ ६० ॥

अन्वय--चित्रसेनः तत्र रन्तुं सरस्तीरं समागतः, तद्भटैः वार्यमाणः शितैः विशिखैः तान् जघान ।

शब्दार्थ—चित्रसेनः=तन्नामको गन्धर्वः, तत्र=द्वैतवने, रन्तुं=क्रीडितुम्, सरस्तीरं=तडागतटम्, समागतः=संप्राप्तः । तद्भटैः=दुर्योधनसैनिकैः वार्यमाणः=निरुद्ध्यमानः, शितैः=तीक्ष्णैः, विशिखैः=बाणैः, तान्=दुर्योधनभटान्, जघान=मारयामास ।

भावार्थ—वहां चित्रसेन गन्धर्व रमण करने के लिए तालाब के किनारे आये तो दुर्योधन के सैनिको ने उन्हें रोका । उन्होनें तीक्ष्ण बाणों से उन सैनिको का वध किया ।

प्रद्राव्य कर्णं गन्धर्वो बद्ध्वा दुर्योधनं व्रजन् ।
आहूयतैतत्स्त्रीशोकात् सदयैरर्जुनादिभिः ॥ ६१ ॥

अन्वय--गन्धर्वः कर्णं प्रद्राव्य दुर्योधनं बद्ध्वा व्रजन् एतत्स्त्रीशोकात् सदयैः अर्जुनादिभिः आहूयत ।

शब्दार्थ—गन्धर्वः = चित्ररथः, कर्णं=राधेयम्, प्रद्राव्य=विजित्य, दुर्योधनं=सुयोधनम्, बद्ध्वा=निगडयित्वा, व्रजन्=गच्छन्, एतत्स्त्रीशोकात् तत्पत्नीभानुमतीविलापात्, सदयैः = सकरुणैः, अर्जुनादिभिः=पाण्डवैः, आहूयत=आकार्यत।

भावार्थ—गंधर्व चित्ररथ कर्ण को जीत और दुर्योधन को बांधकर जाने लगा। किन्तु भानुमती के विलाप से दयाई अर्जुनादि पाण्डवों ने उसे पुनः ललकारा।

चिरं प्रयुद्ध्य तैरेष जितोऽमुञ्चत् सुयोधनम्।
भीमादयस्तमानिन्युर्ह्रीणमग्रजसन्निधिम् ॥ ६२ ॥

अन्वय—चिरम् प्रयुद्ध्य तैः जितः एषः सुयोधनम् अमुञ्चत्, भीमादयः ह्रीणं तम् अग्रजसन्निधिम् आनिन्युः।

शब्दार्थ—तैः = अर्जुनादिभिः, चिरं = बहुकालपर्यन्तम्, प्रयुद्ध्य = युद्ध्वा, जितः=विजितः, एषः=चित्रसेनः, सुयोधनं=दुर्योधनम्, अमुञ्चत्= अत्यजत्। भीमादयः=वृकोदरप्रमुखाः पाण्डवाः, ह्रीणम् = लज्जितम्, तं=सुयोधनम्, अग्रजसन्निधिम्=युधिष्ठिरसमीपम्, निन्युः=अनयन्।

भावार्थ—पाण्डवों का गन्धर्व के साथ बहुत कालतक युद्ध हुआ। अन्त में गन्धर्व चित्रसेन पराजित हुआ और उसने दुर्योधन को छोड़ दिया। भीमादि पाण्डव लज्जित दुर्योधन को युधिष्ठिर के पास ले आये।

कृतापराधमप्येनं तादृशं रिपुमात्मनः।
युधिष्ठिरः सान्त्वयित्वा मृदुवाक्यैर्व्यसर्जयत् ॥ ६३ ॥

अन्वय—युधिष्ठिरः कृतापराधम् अपि तादृशम् आत्मनः रिपुम् एनम् मृदुवाक्यैः सान्त्वयित्वा व्यसर्जयत्।

शब्दार्थ—युधिष्ठिरः = धर्मराजः, कृतापराधम्=कृतापकारम् अपि, तादृशम्=तत्प्रकारकम्, आत्मनः=स्वस्य, रिपुं=शत्रुम्, एनं = दुर्योधनम्,

मृदुवाक्यैः = स्निग्धवाक्यैः, सान्त्वयित्वा=सान्त्वनां कृत्वा, व्यसर्जयत् = प्रास्थापयत् ।

भावार्थ—घोर से घोर अपराध करनेवाले अपने शत्रु दुर्योधन को भी युधिष्ठिर ने मधुर वाक्यों से समझाकर लौटाया ।

स तादृशापमानेन स्थितः प्रायोपवेशने ।

शकुन्यादित्यपुत्राभ्यां प्रसाद्यानीयतालयम् ॥ ६४ ॥

अन्वय—सः तादृशापमानेन प्रायोपवेशने स्थितः शकुन्यादित्यपुत्राभ्यां प्रसाद्य आलयम् आनीयत ।

शब्दार्थ—सः = दुर्योधनः, तादृशापमानेन=तत्प्रकारकेण युधिष्ठिर-कर्तृक-क्षमाप्रदानरूपापमानेन, प्रायोपवेशने=अनशने, स्थितः=कृतनिश्चयः, शकुन्यादित्यपुत्राभ्यां=गान्धारीभ्रातृकर्णाभ्याम्, प्रसाद्य=सन्तोष्य, आलयम्= निलयम्, 'निकाय्यनिलयाल्याः' इत्यमरः, आनीयत = आनीयते स्म ।

भावार्थ—इस प्रकार अपमानित हो दुर्योधन आमरण अनशन करने लगा । शकुनि और कर्ण समझा-बुझाकर उसे घर ले आये ।

नियुज्य दिग्जये कर्णं वशे कृत्वाऽखिलान्नृपान् ।

स पौण्डरीकमाहृत्य स्वं कृतार्थममन्यत ॥ ६५ ॥

अन्वय—सः दिग्जये कर्णं नियुज्य अखिलान् नृपान् वशे कृत्वा पौण्डरीकम् आहृत्य स्वं कृतार्थम् अमन्यत ।

शब्दार्थ—सः=सुयोधनः, दिग्जये=दिशां विजये, कर्णं = सूर्यपुत्रम्, नियुज्य=निर्धार्य, अखिलान्=समस्तान्, नृपान्=राज्ञः, वशे=अधीने, कृत्वा=स्थापयित्वा, पौण्डरीकम्=तन्नामकं यज्ञम्, आहृत्य=कृत्वा, स्वम्= आत्मानम्, कृतार्थं = कृतकृत्यम्, अमन्यत=मन्यते स्म ।

भावार्थ—दुर्योधन ने कर्ण को दिग्विजय के लिए नियुक्त कर और संपूर्ण राजाओं को वश करके पौंडरीक नामक यज्ञ किया और स्वयं को कृतार्थ मानने लगा ।

कदाचित् सैन्धवो राजा मृगयार्थं गतो वनम् ।
द्रौपदीं वीक्ष्य कामार्तोऽहरदेकाकिनीं बलात् ॥ ९६ ॥

अन्वय—कदाचित् मृगयार्थं वनं गतः सैन्धवः राजा द्रौपदीम् एकाकिनीम् वीक्ष्य कामार्तः बलात् अहरत् ।

शब्दार्थ—कदाचित् = कस्मिंश्चित् समये, सैन्धवः = सिन्धुदेशीयः, राजा=नृपः जयद्रथः, मृगयार्थम्=आखेटाय, वनं=अरण्यं, गतः=प्राप्तः, द्रौपदीं=कृष्णां, एकाकिनीम्=अन्यासंयुक्ताम्, वीक्ष्य=दृष्ट्वा, कामार्तः=कामातुरः बलात् = हठात्, अहरत् = अपाहरत् ।

भावार्थ—एक समय सिंधुदेश का राजा जयद्रथ शिकार के लिए उस जंगल में आया । वहाँ उसने द्रौपदी को एकाकिनी देखा एवं काम-पीडित हो बलपूर्वक उसका अपहरण किया ।

पाण्डवा मृगयां कृत्वा प्राप्य गेहं निशम्य तत् ।
दुद्रुवुः पृष्ठतस्तस्य जगृहुस्तं खलं क्षणात् ॥ ९७ ॥

अन्वय—पाण्डवाः मृगयां कृत्वा गेहं प्राप्य तत् निशम्य तस्य पृष्ठतः दुद्रुवुः, क्षणात् खलं तं जगृहुः ।

शब्दार्थ—पाण्डवः=युधिष्ठिरादयः, मृगयाम्=आखेटम्, कृत्वा=विधाय, गेहं=भवनम्, प्राप्य = आसाद्य, तत् = द्रौपदीहरणम्, निशम्य=आकर्ण्य, तस्य = जयद्रथस्य, पृष्ठतः = पार्श्वतः, दुद्रुवुः = अनुजग्मुः । क्षणात् = तत्कालम्, खलं = दुष्टं, तम् = जयद्रथम्, जगृहुः=अगृह्णन् ।

भावार्थ—पाण्डव शिकार कर जब घर लौटे, तो उन्हें द्रौपदी के अपहरण का समाचार मिला । तत्काल वे जयद्रथ के पीछे दौड़ पड़े और क्षणभर में उस दुष्ट को पकड़ लिया ।

भार्यापहारिणं हन्तुं तं भीमे प्रार्थयत्यपि ।
परिहर्तुं स्वसुः शोकं प्रमुमोच युधिष्ठिरः ॥ ९८ ॥

अन्वय - युधिष्ठिरः भीमे भार्यापहारिणं तं हन्तुं प्रार्थयति अपि स्वसुः शोकं परिहर्तुं प्रमुमोच ।

शब्दार्थ—युधिष्ठिरः = धर्मराजः, भीमे = वृकोदरे, भार्यापहारिणं = द्रौपद्यपहरणशीलम्, तम् = जयद्रथम्, हन्तुं = मारयितुम्, प्रार्थयति अपि = याचमाने अपि, स्वसुः = भगिन्याः, शोकम् = दुःखम्, परिहर्तुं = दूरीकर्तुम्, प्रमुमोच = अमुञ्चत् ।

भावार्थ—भीम ने यद्यपि द्रौपदी का अपहरण करनेवाले जयद्रथ के वध की प्रार्थना की, तथापि अपनी भगिनी को शोक से बचाने के लिए युधिष्ठिर ने उसे छोड़ दिया ।

स दुष्टः शिवमाराध्य जेतुं पाण्डुसुतान् युधि ।
प्रीतादस्माद् वरान् प्राप विनाऽर्जुनपराभवम् ॥ ९९ ॥

अन्वय - दुष्टः सः युधि पाण्डुसुतान् जेतुं शिवम् आराध्य प्रीतात् अस्मात् अर्जुनपराभवं विना वरान् प्राप ।

शब्दार्थ—दुष्टः = दुर्जनः, सः = जयद्रथः, युधि = युद्धे, पाण्डुसुतान् = पाण्डवान्, जेतुं = विजेतुम्, शिवं = शङ्करम्, आराध्य = संपूज्य, अर्जुनपराभवं विना = अर्जुनम् अविजित्य एव, प्रीतात् = प्रसन्नात्, अस्मात् = शिवात्, वरान् = इष्टाशीर्वादान्, प्राप = लेभे ।

भावार्थ—दुष्ट जयद्रथ ने युद्ध में पाण्डवों को जीतने के लिए भगवान् शंकर की आराधना की । आराधना से प्रसन्न शंकर से उसनेअर्जुन की पराजय छोड़ अन्य अभीष्ट वर प्राप्त किये ।

कदाचिदिन्द्रो द्विजवत् कर्णं प्राप्यास्य कुण्डले ।
कवचं चार्थयल्लेभे शक्तिं दत्त्वैकपातिनीम् ॥ १०० ॥

अन्वयः—कदाचित् इन्द्रः द्विजवत् कर्णं प्राप्य, एकपातिनीं शक्तिं दत्त्वा अस्य कुण्डले कवचं च अर्थयत् च लेभे ।

शब्दार्थ—कदाचित् = एकदा, इन्द्रः = देवराजः, द्विजवत् = ब्राह्मण-

वत् , कर्ण = राधेयम् , प्राप्य = गत्वा, एकपातिनीं = अनन्यपातिनीम्, शक्तिम् = आयुधविशेषं, दत्वा = समर्प्य, अस्य = कर्णस्य, कुण्डले = श्रवणभूषणे, च, कवचं = आच्छादनशस्त्रं, अर्थयत् = प्रार्थयत् , लेभे च = प्राप च ।

भावार्थ—एकबार इन्द्र ब्राह्मण के वेष मे कर्ण के पास आये, उससे कवच-कुण्डल की याचना की तथा उन्हें अमोघपातिनी शक्ति के बदले प्राप्त किया ।

तृणबिन्द्वाश्रमे तिष्ठन् धर्मजो हरिणाऽऽहृताम् ।
अन्विष्यन्नरणीं प्राप वनं सभ्रातृको घनम् ॥ १०१ ॥

अन्वयः—धर्मजः तृणबिन्द्वाश्रमे तिष्ठन् हरिणा आहृताम् अरणीम् अन्विष्यन् सभ्रातृकः घनं वनं प्राप ।

शब्दार्थ—धर्मजः = युधिष्ठिरः, तृणबिन्द्वाश्रमे = एतन्नाम्नः मुनेः आश्रमे, तिष्ठन् = वर्तमानः, हरिणा = श्रीकृष्णेन, आहृताम् = आनीताम्, अरणीम् = अग्निमथनीम् , अन्विष्यन् = मार्गयन् , सभ्रातृकः = भ्रातृभिः सहितः, घनं = सान्द्रम् , वनम् = अरण्यम् , प्राप = आजगाम ।

भावार्थ—युधिष्ठिर तृणबिन्दु मुनि के आश्रम में ठहरे । अनन्तर वे भगवान् श्रीकृष्ण से प्राप्त अरणी का अन्वेषण करने के लिए घोर जंगल में पहुँचे ।

तृषितेष्वनुजेष्वद्भ्यः सरः प्राप्य पिपासुषु ।
यक्षः पप्रच्छ तान् प्रश्नानवज्ञातोऽप्यपातयत् ॥ १०२ ॥

अन्वय—तृषितेषु अनुजेषु अद्भ्यः सरः प्राप्य पिपासुषु यक्षः तान् प्रश्नान् पप्रच्छ, अवज्ञातः अपि [तान्] अपातयत् ।

शब्दार्थ—तृषितेषु = तृष्णाकुलेषु, अनुजेषु = कनिष्ठभ्रातृषु, अद्भ्यः = जलग्रहणार्थम् , सरः = तडागम्, प्राप्य = आगत्य, पिपासुषु = पानोत्सुकेषु सत्सु, यक्षः=किंपुरुषः, तान्=अनुजान् , प्रश्नान् ,=अनुयोगान्

पप्रच्छ = पृष्टवान्, अवज्ञातोऽपि = अज्ञातोऽपि, [तान्], अपातयत् = पातयामास।

भावार्थ—युधिष्ठिर के तृषार्त अनुज पानी के लिए जब तालाब के पास आये, तो यक्ष ने उनसे प्रश्न किये। समुचित उत्तर न मिलने पर यक्ष ने उन्हें तालाब में ढकेल दिया।

अन्विष्यंस्तान् धर्मसूनुर्दृष्ट्वा सरसि पातितान्।

जलमेतन्मृतौ हेतुर्निश्चित्येत्यग्रहीज्जलम्॥ १०३॥

अन्वय—धर्मसूनुः तान् अन्विष्यन् सरसि पातितान् दृष्ट्वा एतन्मृतौ जलं हेतुः इति निश्चित्य जलम् अग्रहीत्।

शब्दार्थ—धर्मसूनुः = युधिष्ठिरः, तान् = पाण्डवान्, अन्विष्यन् = मार्गयन्, सरसि = तटाके पातितान् = अधोनीतान्, दृष्ट्वा = अवलोक्य, एतन्मृतौ = पाण्डवानां मरणे, जलं = पानीयम्, हेतुः = कारणम्, इति = इत्थम्, निश्चित्य = सङ्कल्प्य, जलं = सलिलम्, अग्रहीत् = गृहीतवान्।

भावार्थ—युधिष्ठिर ने अपने भाइयों को खोजा और उन्हें पानी में गिरे हुए देख! निश्चय किया कि इनके मरण में पानी ही कारण है। फिर उसने जल ग्रहण किया।

यक्षस्त्वाह मम प्रश्नानुक्त्वाऽऽपः पातुमर्हसि।

नो चेद् भ्रातृपथं याया मम शासनलङ्घनात्॥ १०४॥

अन्वय—यक्षः तु आह [त्वम्] मम प्रश्नान् उक्त्वा आपः पातुम् अर्हसि, नो चेद् मम शासनलङ्घनात् भ्रातृपथं यायाः।

शब्दार्थ—यक्षः = तु किम्पुरुषः तु, आह = उवाच, [त्वम्], मम= मे, प्रश्नान्=पृच्छाः, उक्त्वा=समाधाय, आपः=जलम्, पातुम्=ग्रहीतुम्, अर्हसि = शक्नोषि, नो चेद् = इत्थं न स्यात् तर्हि, मम = मे, शासनलङ्घनात् = आज्ञोल्लङ्घनात्, भ्रातृपथम् = अनुजानुसृतमार्गम्, मरणमिति भावः, यायाः = प्राप्नुयाः।

भावार्थ—यक्ष ने युधिष्ठिर को रोका—'तुम मेरे प्रश्नों का उत्तर देकर ही जल पी सकते हो। अन्यथा मेरी आज्ञा उल्लंघन करने पर अपने छोटे भाइयों के समान ही मृत्यु का आलिंगन करोगे'।

इत्युक्तोऽस्य बहून् प्रश्नान् सद्य उत्तरयन्नसौ।
वृणीष्वेष्वेकमित्युक्तोऽवृणोन्नकुलजीवितम् ॥ १०५ ॥

अन्वय—इति उक्तः असौ अस्य बहून् प्रश्नान् सद्यः उत्तरयन् एषु एकं वृणीष्व इति उक्तः नकुलजीवितम् अवृणोत्।

शब्दार्थ—इति = इत्थम्, उक्तः=गदितः, असौ = युधिष्ठिरः, अस्य = यक्षस्य, बहून्=अनेकान्, प्रश्नान् = अनुयोगान्, उत्तरयन् = समादधन्, 'एषु = अनुजेषु, एकम्, वृणीष्व = वरय, इति=इदम्, उक्तः = आश्वस्तः, नकुलजीवितम् = नकुलस्य जीवनम्, अवृणोत् = वरयामास।

भावार्थ—यक्षके इस प्रकार शर्त लगाने पर युधिष्ठिर ने उसके सभी प्रश्नों का समुचित उत्तर दिया। इन अनुजों में से एक का वरण करो, यक्ष के यह आश्वासन देने पर उसने नकुल का पुनर्जीवन माँगा।

भीमार्जुनौ रिपुवधे शक्तौ मुक्त्वा विमातृजम्।
कथं वरयसीत्युक्तोऽवददेनं युधिष्ठिरः ॥ १०६ ॥

अन्वय—रिपुवधे शक्तौ भीमार्जुनौ मुक्त्वा विमातृजं कथं वरयसि इति उक्तः युधिष्ठिरः एनम् अवदत्।

शब्दार्थ—रिपुवधे=शत्रुनाशे, शक्तौ=समर्थौ, भीमार्जुनौ=वृकोदरपार्थौ, मुक्त्वा = विसृज्य, विमातृजम् = विमातुः पुत्रं नकुलम्, कथं=केन प्रकारेण, वरयसि = वृणोषि, इति = इदम्, [यक्षेण], उक्तः=कथितः, युधिष्ठिरः= धर्मराजः, एनं = यक्षम्, अवदत् = अवोचत्।

भावार्थ—'भीम एवं अर्जुन शत्रु का वध करने में समर्थ हैं, उनको छोड़ अपनी विमाता के पुत्र नकुल को क्यों बचाया?' इस प्रकार यक्ष द्वारा पूछे जाने पर युधिष्ठिर ने उत्तर दिया।

कुन्तीमाद्र्यौ जनन्यौ मे स्यातां पुत्रान्विते यथा ।
आनृशंस्यात् तथा याचे नकुलस्तेन जीवतु ॥ १०७ ॥

अन्वय—मे जनन्यौ कुन्तीमाद्र्यौ यथा पुत्रान्विते स्याताम्, आनृशंस्यात् तथा याचे, तेन नकुलः जीवतु ।

शब्दार्थ—मे=मम जनन्यौ = मातरौ, कुन्तीमाद्र्यौ=कुन्ती माद्री च, पुत्रान्विते=सुतसंपन्ने, स्याताम्=भवेताम्, आनृशंस्यात्=दयायाः, तथा= तेन प्रकारेण, याचे = प्रार्थये, तेन = हेतुना, नकुलः अन्यतरः माद्रीतनयः, जीवतु = प्राणान् धारयतु ।

भावार्थ—कुन्ती और माद्री दोनों मेरी माताएँ हैं । दोनों पुत्रवती रहें, यही मैं चाहता हूँ । अतः दयार्द्रहृदय से मैं आपसे नकुल के प्राणों की भिक्षा मांगता हूँ ।

तुष्टः स तस्य वाक्येन सर्वान् भ्रातॄनजीवयत् ।
अवादीद् वत्सः धर्मोऽहं परीक्षार्थं तवागतः ॥ १०८ ॥

अन्वय—सः तस्य वाक्येन तुष्टः [सन्] सर्वान् भ्रातॄन् अजीवयत्, [च] अवादीत् वत्स अहम् धर्मः तव परीक्षार्थम् आगतः ।

शब्दार्थ—सः=यक्षः, तस्य=युधिष्ठिरस्य, वाक्येन = उत्तरवचनेन, तुष्टः=प्रसन्नः सन्, सर्वान्=अखिलान्, भ्रातॄन्=बन्धून् भीमादीन्, अजीवयत्=जीवयति स्म [च] अवादीत्=अवोचत्, वत्स=पुत्र अहं= धर्मः, तव = ते, परीक्षार्थं = परीक्षां कर्तुम्, आगतः = प्राप्तः अस्मि इति शेषः ।

भावार्थ—यक्ष युधिष्ठिर के उत्तरों को सुनकर सन्तुष्ट हुआ । उसने सभी भाइयों को प्राणदान दिया और युधिष्ठिर से कहा—'वत्स ! मैं धर्म हूँ, तुम्हारी परीक्षा के लिए यहाँ आया हूँ' ।

आनृशंस्येन तुष्टस्ते वरान् याचस्व काङ्क्षितान् ।
वर्षे त्रयोदशेऽज्ञातः सानुजश्च चरिष्यसि ॥ १०९ ॥

अन्वय—[अहम्] ते आनृशंस्येन तुष्टः; काङ्क्षितान् वरान् याचस्व; त्रयोदशे वर्षे अज्ञातः सानुजः च चरिष्यसि ।

शब्दार्थ—[अहम्=धर्मः], ते=तवः, आनृशंस्येन=दयया, तुष्टः = प्रसन्नः अस्मि; काङ्क्षितान्=इच्छितान्, वरान्=आशिषः, याचस्व=प्रार्थय; त्रयोदशे वर्षे = त्रयोदशे हायने, अज्ञातः = अविदितः, सानुजः=कनिष्ठ-भ्रातृसमवेतः, च, चरिष्यसि = विचरिष्यसि ।

भावार्थ—धर्म ने कहा कि 'मैं तुम्हारी दयालुता से सन्तुष्ट हूँ । इच्छित वरों को मांगो । तेरहवें वर्ष में भाइयों के साथ तुम अज्ञात रूप से भ्रमण करोगे' ।

इत्युक्त्वाऽन्तर्हिते धर्मे राजा स्वाश्रममाययौ ।
ब्राह्मणायाऽरणीं दत्वा विसृज्यासौ च सेवकान् ॥ ११० ॥
प्राप्ते त्रयोदशे वर्षे भार्याभ्रातृयुतोऽव्रजत् ।
अज्ञातवासे कृतधीर्विराटनगरं गतः ॥ १११ ॥

अन्वय—धर्मे इति उक्त्वा अन्तर्हिते [सति] राजा स्वाश्रमम् आययौ; असौ च ब्राह्मणाय अरणीं दत्वा सेवकान् विसृज्य त्रयोदशे वर्षे प्राप्ते भार्याभ्रातृयुतः अव्रजत्; अज्ञातवासे कृतधीः विराटनगरं गतः ।

शब्दार्थ—धर्मे = यक्षरूपधारिणि, इति = पूर्वोक्तम्, उक्त्वा = कथयित्वा, अन्तर्हिते=गुप्ते सति, राजा = नृपः युधिष्ठिरः, स्वाश्रमम्= आत्मनः आश्रमम्, आययौ=आजगाम, च, असौ=युधिष्ठिरः, ब्राह्मणाय= द्विजाय, अरणीम्=अग्निमन्थनीम्, दत्वा = समर्प्य, सेवकान्= किंकरान्, विसृज्य = मुक्त्वा, त्रयोदशे वर्षे = त्रयोदशे हायने, प्राप्ते = समागते, भार्याभ्रातृयुतः=द्रौपदीभीमादिसमवेतः, अव्रजत् = विचचार । अज्ञातवासे= गुप्तरूपेण निवासे, कृतधीः=विहितनिश्चयः, विराटनगरं=विराटराजधानीम्, गतः = प्राप्तः ।

भावार्थ—यक्षरूप धर्म के इस प्रकार कहकर अन्तर्धान होने पर राजा

युधिष्ठिर अपने आश्रम आये। तेरहवाँ वर्ष लगने पर वे भाई और पत्नी के साथ अज्ञातवास में विचरण करते हुए विराटनगर पहुँचे।

कङ्काभिधो द्विजो भूत्वा विराटेनाऽर्चितोऽभवत्।
भीमोऽपि बल्लवः सूदोऽर्जुनः षण्ढो बृहन्नटा॥ ११२॥

अन्वय—[सः] कङ्काभिधः द्विजः भूत्वा विराटेन अर्चितः अभवत्। भीमः अपि बल्लव सूदः भूत्वा [विराटेन अर्चितः अभवत्], च अर्जुनः बृहन्नटा षण्ढः भूत्वा [विराटेन अर्चितः अभवत्]।

शब्दार्थ—[सः = युधिष्ठिरः], कङ्काभिधः = कङ्कानामकः, द्विजः = ब्राह्मणः, भूत्वा, विराटेन = तन्नाम्ना राज्ञा, अर्चितः = पूजितः, अभवत् = अजायत। भीमः अपि = वृकोदरः अपि, बल्लवः = एतन्नामकः, सूदः = पाचकः [भूत्वा विराटेन अर्चितो अभवत्]। अर्जुनः = धनञ्जयः, बृहन्नटा = एतन्नामा, षण्ढः = नपुंसकः [भूत्वा विराटेन अर्चितः अभवत्]।

भावार्थ—विराटनगर में युधिष्ठिर कंक नामक ब्राह्मण के वेष में, भीम बल्लव नामक रसोइये के वेष में और अर्जुन बृहन्नटा नामक षण्ढ के वेष में पहुँचे। वे वहाँ महाराज विराट द्वारा पूजित एवं सम्मानित हुए।

अश्ववारश्च नकुलः सहदेवो गवाधिपः।
सैरन्ध्रयभूद् द्रौपदी च राजदारोपसेविनी॥ ११३॥

अन्वय—[च] नकुलः अश्ववारः अभूत्, सहदेवः गवाधिपः [अभूत्], द्रौपदी च राजदारोपसेविनी सैरन्ध्री [अभूत्]।

शब्दार्थ—च=तथा, नकुलः=प्रथममाद्रीतनयः, अश्ववारः=अश्वपालकः, अभूत् = बभूव ; सहदेवः = माद्र्याः द्वितीयतनयः, गवाधिपः=धेनुपालः, [अभूत्]। च, द्रौपदी = कृष्णा, राजदारोपसेविनी = राजदाराणाम् परिचारिका, सैरन्ध्री = तन्नामिका, [अभूत्]।

भावार्थ—नकुल ने वहाँ सईसका वेष लिया। सहदेव गोरक्षक हुए। द्रौपदी सैरन्ध्री के वेष में राजमहिषी की सेवा में नियुक्त हुई।

राष्ट्रियः कीचको नाम वसत्स्वेष्वेवमेकदा।
राजदाराज्ञया कृष्णां स्वगृहास्तां वचोऽब्रवीत्॥ ११४॥

अन्वय—एषु एवं वसत्सु एकदा कीचकः नाम राष्ट्रियः राजदाराज्ञया स्वगृहास्ताम् कृष्णां वचः अब्रवीत्।

शब्दार्थ—एषु = पाण्डवेषु, एवं = अज्ञातवेषैः, वसत्सु = तिष्ठत्सु, सत्सु एकदा = कदाचित्, कीचकः नाम = एतन्नाम्ना प्रसिद्धः, राष्ट्रियः = राजश्यालः, 'राजश्यालस्तु राष्ट्रिय' इत्यमरः, राजदाराज्ञया = राजमहिष्याः आदेशेन, स्वगृहास्ताम् = निजप्रासादे प्राप्ताम्, कृष्णां=द्रौपदीम्, वचः= वचनम्, अब्रवीत् = अवोचत्।

भावार्थ—इस प्रकार विराटनगर में पाण्डवों के अज्ञातवास करते रहने पर एकबार सैरंध्री (द्रौपदी) राजमहिषी की आज्ञा से राजश्यालक कीचक के घर पहुँची। उस समय कीचक ने उससे कहा।

रतये मां भजस्वेति वारितश्चाऽहनद् भृशम्।
ततो रहसि सा भीमं प्राहैनं मारयेरिति॥ ११५॥

अन्वय—रतये मां भजस्व इति; च [द्रौपद्या] वारितः [ताम्] भृशम् अहनत्; ततः रहसि सा भीमं प्राह एनं मारयेः इति।

शब्दार्थ—रतये = क्रीडायै, मां, भजस्व=प्राप्नुहि, इति। च [द्रौपद्या], वारित = निवारितः, [ताम्], भृशम्=अत्यन्तम्, अहनत्=मारयामास। ततः = अनन्तरम्, रहसि = एकान्ते, सा सैरन्ध्री = द्रौपदी, भीमम्, प्राह = उवाच, एनं = कीचकम्, मारयेः = विनाशय इति।

भावार्थ—कीचक ने सैरंध्री से कहा—'तुम रमण के लिए मेरे पास आओ'। सैरंध्री के रोकने पर कीचक ने उसे बहुत पीटा। पश्चात् सैरंध्री ने एकान्त में भीम से कहा—'तुम कीचक का वध करो'।

तदाज्ञया च तं व्याजादाह्वयन्नर्त्तनालये।
कीचकं तत्र स प्राप्तं निशि तूष्णीममारयत्॥ ११६॥

अन्वय—च [सा] तदाज्ञया व्याजात् नर्तनालये तम् आह्वयत्, [सः] तत्र निशि प्राप्तं कीचकं तूष्णीम् अमारयत्।

शब्दार्थ—सा = द्रौपदी, तदाज्ञया=भीमस्य आदेशेन, व्याजात् = कपटात्, नर्तनालये=नृत्यशालायाम्, आह्वयत् = आहूतवती। [सः = भीमः], तत्र = नर्तनालये, निशि = रात्रौ, प्राप्तम् = आगतम्, कीचकं = राजश्यालकम्, तूष्णीं = निःशब्दम्, अमारयत् = अवधीत्।

भावार्थ—भीम के आदेश से द्रौपदी ने कीचक को किसी बहाने नृत्यशाला में बुलाया। भीम ने वहाँ रात में आये हुए कीचक को चुपचाप मार डाला।

सैरन्ध्युच्चैर्विचुक्रोश गन्धर्वैः स हतस्त्विति।
शतसंख्यास्तदनुजाः प्राप्यार्थोद्वीक्ष्य तं मृतम्।
श्मशानं सह सैरन्ध्र्या नीत्वा चित्यामदीपयन्॥ ११७॥

अन्वय—सैरन्ध्री उच्चैः विचुक्रोश गन्धर्वैः सः हतः इति। शतसंख्याः तदनुजाः प्राप्य तं मृतम् उद्वीक्ष्य, सैरन्ध्रया सह श्मशानं नीत्वा चित्याम् अदीपयन्।

शब्दार्थ—सैरन्ध्री=द्रौपदी, उच्चैः = तारस्वरेण, विचुक्रोश = विललाप, 'गन्धर्वैः = यक्षैः, सः = कीचकः, हतः = मारितः', इति। शतसंख्याः = शतसंख्याकाः, तदनुजाः = कीचकस्य कनिष्ठभ्रातरः, तं = कीचकम्, मृतं = विगतप्राणम्, उद्वीक्ष्य=निरीक्ष्य, सैरन्ध्रया = द्रौपद्या, सह = साकम्, श्मशानम्=शवदाहभूमिम्, नीत्वा=प्रापयित्वा, चित्याम्= चितायाम्, अदीपयन् = प्रज्वालयामासुः।

भावार्थ—सैरन्ध्री ने जोर से आक्रोश किया कि कीचक गन्धर्वों

द्वारा मारा गया। कीचक के सौ छोटे भाई वहाँ आये और सैरन्ध्री के साथ उसे श्मशान ले गये। वहाँ उन्होंने उसे चिता पर जला दिया।

सैरन्ध्र्या रुदितैस्तत्राऽऽहूतो भीमः शतं रिपून्।
हत्वा विमोच्य दयितां प्रीतः प्राप पुनर्गृहम्॥ १८॥

अन्वय—तत्र सैरन्ध्र्याः रुदितैः आहूतः भीमः शतं रिपून् हत्वा दयितां विमोच्य प्रीतः पुनः गृहं प्राप।

शब्दार्थ—तत्र = श्मशाने, सैरन्ध्र्याः = द्रौपद्याः, रुदितैः = विलापैः, आहूतः —आकारितः, भीमः = पवनतनयः, शतं रिपून् = शतसंख्यकान् शत्रून्, हत्वा=विनाश्य, दयितां=प्रियां भार्यां द्रौपदीम्, विमोच्य = मोचयित्वा, प्रीतः=प्रसन्नः सन्, पुनः=भूयः, गृहं=सदनम्, प्राप=लेभे।

भावार्थ—सैरन्ध्री का रुदन सुनकर भीम वहाँ आया और उसने सौ शत्रुओं का वधकर द्रौपदी को छुड़ाया। अनन्तर प्रसन्न होकर द्रौपदी को साथ ले पुनः घर को गया।

अथ वार्तामिमां श्रुत्वा धार्तराष्ट्रश्चराहृताम्।
निश्चित्य भीमकर्मैतत्सुशर्माणं खलोऽब्रवीत्॥ ११९॥

अन्वयः—अथ खलः धार्तराष्ट्रः चराहृताम् इमां वार्तां श्रुत्वा, एतत् भीमकर्म [इति] निश्चित्य सुशर्माणम् अब्रवीत्।

शब्दार्थ—अथ = अनन्तरम्, खलः = दुष्टः, धार्तराष्ट्रः = दुर्योधनः, चराहृतां = दूतद्वारा आनीताम्, इमां = कीचकवधरूपाम्, वार्तां = वृत्तान्तम्, श्रुत्वा = आकर्ण्य एतत् = कीचकमारणम्, भीमकर्म = भीमस्य कार्यम्, [इति = एवम्], निश्चित्य = निर्धार्य, सुशर्माणम् = त्रिगर्तनरेशम्, अब्रवीत् = उवाच।

भावार्थ—अनन्तर दुष्ट दुर्योधन ने दूतों द्वारा प्राप्त कीचकवध की यह वार्ता सुनकर यह भीम का काम है, ऐसा निश्चित समझकर त्रिगर्तनरेश सुशर्मा से कहा।

याहि वैराटनगरं हर गास्तद्रिरक्षया ।
आगतान् पाण्डवान् दृष्ट्वा कुरु भग्नव्रतानिति ॥ १२० ॥

अन्वय—[त्वम्] वैराटनगरं याहि, गाः हर, [च] तद्रिरक्षया आगतान् पाण्डवान् दृष्ट्वा भग्नव्रतान् कुरु इति ।

शब्दार्थ—[त्वम्], वैराटनगरम्=विराटराजधानीम्, याहि=गच्छ; गाः=धेनूः, हर=अपहर; तद्रिरक्षया=धेनुरक्षणेच्छया, आगतान्=प्राप्तान्, पाण्डवान्=युधिष्ठिरादीन्, दृष्ट्वा=वीक्ष्य, भग्नव्रतान्=त्यक्तप्रतिज्ञान्, कुरु = विधेहि ।

भावार्थ—दुर्योधन ने सुशर्मा से कहा कि 'तुम विराट् की राजधानी में जाओ और उसकी गायों का अपहरण करो। उनके रक्षा के लिए आये पाण्डवों को देखकर उनका अज्ञातवास रूपव्रत भंग करो'।

तथेत्युक्त्वा स गा हृत्वा बद्ध्वा तद्रक्षकं नृपम् ।
व्रजन् निगृह्य भीमेन धर्मवाचा व्यमुच्यत ॥ १२१ ॥

अन्वय—सः तथा इति [उक्त्वा], एत्य, गाः हृत्वा, तद्रक्षकं नृपं बद्ध्वा व्रजन् भीमेन निगृह्य धर्मवाचा व्यमुच्यत ।

शब्दार्थ—सः=त्रिगर्तनृपतिः सुशर्मा, तथा इति = 'एवमस्तु' इति, [उक्त्वा=उदीर्य], एत्य=विराटनगरं संप्राप्य, गाः = धेनूः, हृत्वा = अपहृत्य, तद्रक्षकम् = [तासां रक्षकः तद्रक्षकः, तम्] गवां रक्षकम्, नृपम् = राजानम्, बद्ध्वा=नियम्य, व्रजन् = गच्छन्, भीमेन = वृकोदरेण, निगृह्य = धृत्वा, धर्मवाचा = युधिष्ठिरादेशेन, व्यमुच्यत = मुच्यते स्म ।

भावार्थ—त्रिगर्तनरेश सुशर्मा ने 'तथास्तु' कहा और विराटनगर पर आक्रमण कर राजा विराट की साठ हजार गायों का अपहरण कर उनके संरक्षक राजा विराट् को बाँध ले जाने का उपक्रम किया। भीम ने त्रिगर्त के राजा सुशर्मा को बन्दी बनाकर धर्मराज के सामने उपस्थित किया, किन्तु सदय धर्मराज ने उसे छोड़ दिया।

ससैन्यो धार्तराष्ट्रश्च विराटनगरोत्तरे।
गा जहाराथ वैराटिर्गोपैः रक्षामयाच्यत ॥ १२२ ॥

अन्वय—अथ ससैन्यः धार्तराष्ट्रः विराटनगरोत्तरे गाः जहार, गोपैः वैराटिः रक्षाम् अयाच्यत।

शब्दार्थ—अथ = अनन्तरम्, ससैन्यः=चतुरङ्गबलयुक्तः, धार्तराष्ट्रः = सुयोधनः, विराटनगरोत्तरे=विराटराजधान्याः उत्तरस्यां दिशि, गाः = षष्टि-सहस्रसंख्याकाः धेनवः, जहार = अहरत्; गोपैः = बल्लवैः, वैराटिः=विराट-पुत्रः उत्तरः, रक्षाम् = संरक्षणम्, अयाच्यत = प्रार्थ्यत।

भावार्थ—इसके अनन्तर दुर्योधन ने चतुरङ्गिणी सेना लेकर विराटनगर की उत्तर दिशा में विराट् की साठ हजार गायों का अपहरण किया। गायों की देखभाल करनेवाले ग्वालों ने आकर विराट्पुत्र उत्तर से रक्षा की याचना की।

स्त्रीसभे श्लाघमानोऽसौ सूतं कृत्वा बृहन्नलाम्।
गतः सेनार्णवं वीक्ष्य भीतः प्रादुद्रुवद् रुदन् ॥ १२३ ॥

अन्वय—स्त्रीसभे श्लाघमानः असौ बृहन्नलां सूतं कृत्वा सेनार्णवं गतः, [तत्] वीक्ष्य भीतः रुदन् प्रादुद्रुवत्।

शब्दार्थ—स्त्रीसभे=(स्त्रीणां सभा स्त्रीसभम्, तस्मिन् स्त्रीसभे, 'सभा राजा मनुष्यपूर्वा' इत्यनेन सूत्रेण नपुंसकता) स्त्रीसमाजे, श्लाघमानः= प्रशंसमानः, असौ=उत्तरः, बृहन्नलां = बृहन्नलाख्य-षण्ढरूपधारिणम् अर्जुनम्, सूतं=सारथिम्, कृत्वा=विधाय, सेनार्णवम्=सेनासागरम्, गतः = अगच्छत्; तत् = सेनार्णवम् वीक्ष्य = दृष्ट्वा, भीतः = भयग्रस्तः, रुदन् = विलपन्, प्रादुद्रुवत् = अपलायत।

भावार्थ—स्त्रीवृन्द में श्लाघित राजकुमार उत्तर बृहन्नलारूपधारी अर्जुन को अपना सारथी बनाकर कौरव-सेना से सामना करने पहुँचा। किन्तु वह कौरव-सैन्य को देख भयभीत हो रोते हुए भागने लगा।

बृहन्नला तमाश्वास्य निश्चाय्यात्मानमर्जुनम् ।

श्मशानस्थशमीवृक्षादवातारयदायुधम् ॥ १२४ ॥

अन्वय—बृहन्नला तम् आश्वास्य, आत्मानम् अर्जुनं निश्चाय्य, श्मशानस्थशमीवृक्षात् आयुधम् अवातारयत् ।

शब्दार्थ—बृहन्नला = अर्जुनः, तम्=राजकुमारम् उत्तरम्, आश्वास्य =समाश्वास्य, आत्मानम्=स्वम् अर्जुनम्=धनञ्जयम्, निश्चाय्य=निश्चयं कारयित्वा, श्मशानस्थशमीवृक्षात्, =(श्मशानस्थः च असौ शमीवृक्षः श्मशानस्थशमीवृक्षः, तस्मात्) = दाहभूमिस्थितात् शमीपादपात्, आयुधम्=शस्त्रम्, अवातारयत्=अवतारयति स्म ।

भावार्थ—बृहन्नला ने उत्तर को आश्वस्त किया और अपने को अर्जुन बतलाकर श्मशानस्थित शमीवृक्ष से अज्ञातवास के आरम्भ में गुप्तरूप से रखे हुए अपने शस्त्रों को उतारा ।

तमेव सारथिं कृत्वा धृतधैर्यं निजाश्रयात् ।

पूर्णाज्ञातस्थितिदिनो धार्तराष्ट्रैरयुद्ध्यत ॥ १२५ ॥

अन्वय—[सः] पूर्णाज्ञातस्थितिदिनः निजाश्रयात् धृतधैर्यं तम् एव सारथिं कृत्वा धार्तराष्ट्रैः अयुद्ध्यत ।

शब्दार्थ—[सः = अर्जुनः], पूर्णज्ञातस्थितिदिनः = (पूर्णानि अज्ञातस्थितेः दिनानि यस्य सः) = निश्शेषाज्ञातवासः, निजाश्रयात् = अर्जुनाश्रयात्, धृतधैर्यं = अवलम्बितसाहसम्, तम् एव =उत्तरम् एव, सारथिं=सूतम्, कृत्वा= विधाय, धार्तराष्ट्रैः=दुर्योधनादिभिः धृतराष्ट्रपुत्रैः, अयुद्ध्यत=युयुधे ।

भावार्थ—अज्ञातवास के दिन पूर्ण होने पर अर्जुन ने कुमार उत्तर को अपना सारथी बनाकर दुर्योधन आदि से युद्ध किया ।

रिपून् व्यस्तान् समस्ताँश्च धुन्वन् प्रस्वापनास्त्रतः ।

सुप्तान् वित्रासयः कृत्स्नान् लवाज्जितान् दययाऽमुचत् ॥१२६ ॥

अन्वय—[सः] प्रस्वापनास्त्रतः व्यस्तान् समस्तान् रिपून् धुन्वन् सुप्तान् विवाससः च कृत्वा लज्जितान् दयया अमुचत् ।

शब्दार्थ—[सः=अर्जुनः], प्रस्वापनास्त्रतः=निद्राप्रवर्तकशस्त्रविशेष-प्रयोगात् ,व्यस्तान्=पृथक् पृथक् स्थितान्, समस्तान्=एकत्रितान् च, रिपून्= शत्रून्, धुन्वन्=कम्पयन्, सुप्तान्=निद्रितान्, विवाससः=निर्वस्त्रान्, कृत्वा = विधाय, लज्जितान् = लज्जाकुलान्, दयया = करुणया, अमुचत्= मुमोच ।

भावार्थ—अर्जुन ने अपने प्रस्वापनास्त्र से अलग-अलग और संपूर्ण शत्रुओं को कंपित करते हुए, प्रसुप्त शत्रुओं को विवस्त्र कर लज्जित को किया और फिर उन्हें सदय हो छोड़ दिया ।

परेद्युः पाण्डवास्तीर्णप्रतिज्ञा द्रौपदीयुताः ।
विराटस्य सदः प्रापुर्धर्मोऽतिष्ठन्नृपासने ।
विस्मितो वीक्ष्य तान् राजा श्रुत्वा तद्वृत्तमात्मजात् ॥१२७॥

अन्वय—परेद्युः तीर्णप्रतिज्ञाः द्रौपदीयुताः पाण्डवाः विराटस्य सदः प्रापुः ; धर्मः नृपासने अतिष्ठत् ; राजा तान् वीक्ष्य [च] आत्मजात् तद्वृत्तं श्रुत्वा विस्मितः ।

शब्दार्थ—परेद्युः = द्वितीयस्मिन् दिने, = तीर्णप्रतिज्ञाः = (तीर्णा प्रतिज्ञाः यैः ते) परिपालितप्रतिज्ञाः, द्रौपदीयुताः=कृष्णया समवेताः, पाण्डवाः=युधिष्ठिरादयः, विराटस्य=तन्नामकस्य राज्ञः, सदः=भवनम्, प्रापुः =आजग्मुः । धर्मः=युधिष्ठिरः, नृपासने = विराटस्य सिंहासने, अतिष्ठत् = उपाविशत् । राजा = विराटः, तान्=पाण्डवान्, वीक्ष्य=दृष्ट्वा, [च], आत्मजात् = पुत्रात् उत्तरात्, तद्वृत्तम्=पाण्डवानां वृत्तान्तं, श्रुत्वा= आकर्ण्य, विस्मितः=आश्चर्यान्वितः, समभूत् इति शेषः ।

भावार्थ—दूसरे दिन अज्ञातवास की प्रतिज्ञा पूर्ण कर पाण्डव द्रौपदी के साथ विराटनरेश की सभा में पहुँचे । धर्मराज युधिष्ठिर विराट्

के सिंहासन पर बैठे। राजा विराट् उनको देख और अपने पुत्र से उनका वृत्तान्त समझकर आश्चर्यचकित हो उठा।

सुतामार्जुनये प्रादात् सम्मान्यैतान् प्रसाद्य च।
अर्जुनस्तेन तनयां भार्यां कुर्विति याचितः॥ १२८॥

अन्वय—[सः] एतान्। सम्मान्य प्रसाद्य च आर्जुनये सुतां प्रादात्; [यतः] तेन अर्जुनः तनयां भार्यां कुरु इति याचितः।

शब्दार्थ—[सः = विराट्राजा], एतान्=पाण्डवान्, सम्मान्य = सत्कृत्य, च, प्रसाद्य = सन्तोष्य, आर्जुनये = (आर्जुनस्य अपत्यं पुमान् आर्जुनिः, तस्मै) = अभिमन्यवे, सुतां = कन्याम् उत्तराम्, प्रादात् = प्रायच्छत्, । [यतः=यस्मात् कारणात्], तेन = विराटेन राज्ञा, अर्जुनः, तनयां = कन्याम्, भार्यां = पत्नीम्, कुरु=विधेहि, इति = एवम्, याचितः=प्रार्थितः।

भावार्थ—राजा विराट ने पाण्डवों को अपने सम्मान-सत्कार से प्रसन्न कर अभिमन्यु को अपनी कन्या उत्तरा प्रदान की, क्योंकि विराट ने अर्जुन से याचना की थी कि तुम मेरी कन्या को भार्या बनाओ।

नोपायंस्त विदञ्छिष्यां तनयार्थं ततोऽवृणोत्।
ततः कृष्णः सात्यकिश्च द्रुपदः ससुतोऽभ्ययात्॥ १२९॥

अन्वय—[अर्जुनः] ताम् शिष्यां विदन् न उपायंस्त, ततः तनयार्थम् अवृणोत्, ततः कृष्णः सात्यकिः च ससुतः द्रुपदः च अभ्ययात्।

शब्दार्थ—[अर्जुनः], ताम् = उत्तराम्, शिष्यां=छात्राम्, विदन्= जानन्, न उपायंस्त = न उदवाहयत्; ततः = तस्मात् कारणात्, तनयार्थम् = अभिमन्युकृते, अवृणोत् = वरयामास। ततः = अनन्तरम्, कृष्णः = वासुदेवः, च सात्यकिः = क्षत्रियविशेषः, ससुतः = धृष्टद्युम्न-समवेतः, द्रुपदः = पाञ्चालनरेशः, अभ्ययात् = अभिजगाम।

भावार्थ—अर्जुन ने उत्तरा को अपनी शिष्या समझकर उससे विवाह

नहीं किया, अपितु अभिमन्यु के लिए उसका वरण किया। अनन्तर कृष्ण, सात्यकि, धृष्टद्युम्न के सहित द्रुपद आदि राजाओं ने कौरवों पर अभियान किया।

ससैन्यो युद्धसाहाय्ये विराटश्च स्थितोऽभवत्॥ १३०॥
युधिष्ठिरस्तु बन्धूनां रिपूणामपि घातने।
जुगुप्समानो दौत्याय प्राहिणोन्मधुसूदनम्॥ १३१॥

अन्वय—ससैन्यः विराटः च युद्धसाहाय्ये स्थितः अभवत्। युधिष्ठिरः तु रिपूणाम् अपि बन्धूनाम् घातने जुगुप्समानः दौत्याय मधूसूदनं प्राहिणोत्।

शब्दार्थ—ससैन्यः=सेनासमवेतः, च विराटः = विराटनामा नृपतिः, युद्धसाहाय्ये = रणे साहाय्यार्थं, स्थितः = सज्जः, अभवत् = अवर्तत। युधिष्ठिरः तु = धर्मराजस्तु, रिपूणां = शत्रूणाम् अपि, बन्धूनाम् = भ्रातॄणां सुयोधनादिनां कौरवाणाम्, घातने = मारणे, जुगुप्समानः=सघृणः, दौत्याय= दौत्यं कर्तुम्, मधुसूदनं=श्रीकृष्णम्, प्राहिणोत्=प्रैषयत्।

भावार्थ—राजा विराट् सेना के साथ युद्ध में सहायता करने के लिए सज्ज हो गया। परन्तु युधिष्ठिर दुर्योधन आदि कौरवों का वध करना निन्द्य मानते थे, क्योंकि शत्रु होने पर भी आखिर वे भाई जो थे। अतः उन्होंने भगवान् श्रीकृष्ण को दूत बनाकर सन्धिवार्ता के लिए भेजा।

पञ्च ग्रामान् स देहीति वदन् दुर्योधनादिभिः।
अदित्सुभिः किञ्चिदपि प्रत्याख्यातोऽभवन् मुहुः॥ १३२॥

अन्वय—पञ्च ग्रामान् देहि इति वदन् सः किञ्चित् अपि अदित्सुभिः दुर्योधनादिभिः मुहुः प्रत्याख्यातः अभवत्।

शब्दार्थ—पञ्च ग्रामान्=ग्रामपञ्चकम्, देहि=प्रयच्छ, इति = इदम्, वदन् =कथयन्, किञ्चित् अपि=स्वल्पम् अपि, अदित्सुभिः=दातुम्

अनिच्छुभिः, दुर्योधनादिभिः = कौरवैः, मुहुः = भूयः, प्रत्याख्यातः = तिरस्कृतः, अभवत् = समजायत ।

भावार्थ--श्रीकृष्ण ने पाण्डवों की ओर से दुर्योधन आदि कौरवों के समक्ष पांच गाँव देने की मांग की । कौरवों ने सुई के बराबर भूमि भी देने से इनकार कर वासुदेव श्रीकृष्ण का बार-बार तिरस्कार किया ।

स बद्धुमीप्सितो दुष्टैर्भीमं स्वं दर्शयन् वपुः ।
स्तुतो भीष्मादिभिः कृष्णः पाण्डवान्तिकमाययौ ॥ १३३ ॥

अन्वय—दुष्टैः बद्धुम् ईप्सितः सः कृष्णः स्वं भीमं वपुः दर्शयन्, भीष्मादिभिः स्तुतः पाण्डवान्तिकम् आययौ ।

शब्दार्थ--दुष्टैः = दुर्जनैः कौरवैः, बद्धुम् = नियन्तुम्, ईप्सितः = अभिलषितः, सः = दूतः कृष्णः वासुदेवः, स्वं = निजम्, भीमम् = भयङ्करम्, वपुः = शरीरम्, दर्शयन् = साक्षात्कारयन्, भीष्मादिभिः = पितामहादिभिः, स्तुतः = ईडितः, पाण्डवान्तिकम्=युधिष्ठिरादीनां समीपम्, आययौ = आजगाम ।

भावार्थ—दुष्ट कौरवों ने श्रीकृष्ण को बांधना चाहा, परन्तु उन्होंने अपना भयंकर रूप दिखलाया । अनन्तर भीष्म पितामह आदि भगवान् कृष्ण की स्तुति करने लगे । पश्चात् वे पाण्डवों के पास आये ।

युयुत्सया ययुर्वृत्वा सैनापत्ये नदीसुतम् ।
धृष्टद्युम्नं च कौरव्याः कुरुक्षेत्रं च पाण्डवाः ॥ १३४ ॥

अन्वय—कौरव्याः नदीसुतं सैनापत्ये वृत्वा च पाण्डवाः धृष्टद्युम्नं [सैनापत्ये वृत्वा] युयुत्सया कुरुक्षेत्रं ययुः ।

शब्दार्थ—कौरव्याः=दुर्योधनादयः धार्तराष्ट्राः, नदीसुतम्=भीमपितामहम्, सैनापत्ये=चमूपतिपदे, वृत्वा=संस्थाप्य, च, पाण्डवाः=युधिष्ठिरादयः पाण्डुपुत्राः, धृष्टद्युम्नं=द्रुपदपुत्रम्, [सैनापत्ये वृत्वा], युयुत्सया = युद्धकरणेच्छया, कुरुक्षेत्रम् = एतन्नामकं रणाङ्गणम्, ययुः=प्रापुः ।

भावार्थ—कौरवों ने भीष्म पितामह को सेनापतिपद पर नियुक्त किया और पाण्डवों ने धृष्टद्युम्न को। अनन्तर दोनों पक्ष युद्ध के लिए कुरुक्षेत्र के मैदान में उतरे।

ततोऽर्जुनं बन्धुवधाद् विरमन्तं सहेतुकैः।
कृष्णो वाक्यैः समाश्वास्य चक्रे रिपुवधे स्थिरम्॥ १३५॥
ततोऽभवद्रणो घोरः कुरूणां पाण्डवैः सह॥ १३६॥

अन्वय—ततः कृष्णः सहेतुकैः वाक्यैः बन्धुवधात् विरमन्तम् अर्जुनं समाश्वास्य रिपुवधे स्थिरं चक्रे। ततः पाण्डवैः सह कुरूणां घोरः रणः अभवत्।

शब्दार्थ—ततः = उभयोः कुरुक्षेत्रे अवतरणानन्तरम्, कृष्णः = भगवान् वासुदेवः, सहेतुकैः = युक्तियुक्तैः, वाक्यैः = गीतावचनामृतैः, बन्धुवधात् = भ्रातृणां कौरवाणां विनाशात्, विरमन्तम् = युद्धात् परावर्तन्तम्, अर्जुनम्=पार्थम्, समाश्वास्य=सान्त्वयित्वा विषादापनोदन-पुरस्सरं बोधयित्वा इत्यर्थः, रिपुवधे=शत्रुनाशे, स्थिरम्=दृढम्, चक्रे= कृतवान्।

भावार्थ—अनन्तर जब अर्जुन अपने भाई कौवों को मारने में हिचकिचाने लगे, उस समय भगवान् श्रीकृष्ण ने गीता के उपदेश से समाश्वस्त कर उन्हें कर्मयोग की ओर प्रेरित किया। तब वे युद्ध के लिए तैयार हो गये। अनन्तर पाण्डवों के साथ कौरवों का घनघोर युद्ध हुआ।

युद्ध्वा दशाहं भीष्मोऽभूदर्जुनेन निपातितः।
द्रोणं कृत्वाऽथ सेनान्यं कौरव्यो युयुधे पुनः॥ १३७॥

अन्वयः—भीष्मः दशाहं युद्ध्वा अर्जुनेन निपातितः अभूत्, अथ कौरव्यः द्रोणं सेनान्यं कृत्वा पुनः युयुधे।

शब्दार्थ—भीष्मः = गाङ्गेयः, दशाहम्=(दश अहानि यस्मिन् तत्)

दशदिनपर्यन्तम्, युद्ध्वा = युद्धं कृत्वा, अर्जुनेन = कौन्तेयेन, निपातितः अभूत्=सम्पात्यते स्म। अथ=अनन्तरम्, कौरव्यः = दुर्योधनः, द्रोणं = द्रोणाचार्यम्, सेनान्यं = सेनापतिम्, कृत्वा = विधाय, पुनः = भूयः, युयुधे=अयुध्यत्।

भावार्थ–भीष्मपितामह दस दिनों तक युद्ध कर अर्जुन द्वारा पराजित हुए। अनन्तर दुर्योधन द्रोणाचार्य को सेनापति बनाकर पुनः युद्ध करने लगा।

ततस्तृतीयदिवसेऽर्जुने संशप्तकान् घ्नति।
भित्त्वाऽरिसेनां सौभद्रे विशत्यन्तस्तु सिन्धुराट्।
भीमादीन् रुरुधेऽथाऽघ्नन् षड्रथाः श्रान्तमार्जुनिम्॥१३८॥

अन्वय—ततः तृतीयदिवसे अर्जुने संशप्तकान् घ्नति, सौभद्रे अरिसेनां भित्वा अन्तः विशति सिन्धुराट् तु भीमादीन् रुरुधे; अथ षड्रथाः श्रान्तम् आर्जुनिम् अघ्नन्।

शब्दार्थ--ततः = अनन्तरम्, तृतीयदिवसे=तृतीयदिने प्राप्ते, अर्जुने= कौन्तेये, संशप्तकान्=चतुर्दशसहस्रान् एतन्नाम्नः वीरान्, घ्नति = मारयति सति, सौभद्रे = अभिमन्यौ, अरिसेनां = शत्रुसैन्यम्, भित्वा = विदार्य, अन्तः = चक्रव्यूहमध्यभागे, विशति = प्रविशति सति, सिन्धुराट् = जयद्रथः, भीमादीन् = पाण्डवान्, रुरुधे = न्यवारयत्। अथ = अनन्तरम् षड्रथाः = षण्महारथिनः रथाः, श्रान्तं = क्लिन्नम्, आर्जुनिम् = अभिमन्युम्, अघ्नन्=मारयामासुः।

भावार्थ—अनन्तर तीसरे दिन अर्जुन ने चौदह हजार तक संशप्तक वीरों को मार डाला। अनन्तर अभिमन्यु ने शत्रुसेना का भेदन कर चक्रव्यूह में प्रवेश किया। सिंधुराज जयद्रथ ने भीमसेन आदि वीरों को चक्रव्यूह के द्वार पर रोक दिया। पश्चात् शत्रुपक्ष के छह महारथियों ने थके-माँदे अभिमन्यु का वध किया।

अर्जुनो निशि तच्छ्रुत्वा प्रतिजज्ञे परेऽहनि ।
सिन्धुराजं निहन्तास्मि प्रवेष्टा वा शुचाविति ॥ १३९ ॥
तच्छ्रुत्वा कुरवोऽरक्षन् सैन्धवं द्रोणमाश्रिताः ॥ १४० ॥

अन्वय—अर्जुनः निशि तत् श्रुत्वा प्रतिजज्ञे परे अहनि सिन्धुराजं निहन्ता अस्मि, शुचौ वा प्रवेष्टा (अस्मि) इति; कुरवः तत् श्रुत्वा द्रोणम् आश्रिताः सैन्धवम् अरक्षन् ।

शब्दार्थ—अर्जुनः = कौन्तेयः, निशि = रात्रौ, तत्=अभिमन्युवधम्, श्रुत्वा = आकर्ण्य, प्रतिजज्ञे = प्रणं कृतवान्, परे अहनि = अन्येद्युः, सिन्धुराजम्=जयद्रथम्, निहन्ता=मारयिता, अस्मि=भवामि, शुचौ = अग्नौ, वा = अथवा प्रवेष्टा = प्रवेशकर्ता [अस्मि] इति । कुरवः = कौरवाः, तत्=प्रतिज्ञाम्, श्रुत्वा=आकर्ण्य, द्रोणं = द्रोणाचार्यम्, आश्रिताः= संश्रिताः, सैन्धवम्=जयद्रथम्, अरक्षन्=ररक्षुः ।

भावार्थ—अर्जुन ने रात्रि में जब अभिमन्यु के वध का समाचार सुना तो प्रतिज्ञा की कि 'कल मैं या तो जयद्रथ का वध कर दूँगा, अथवा अग्नि में प्रवेश करूंगा' । यह प्रतिज्ञा सुनकर कौरव द्रोणाचार्य का आश्रय ले सिन्धुराज जयद्रथ की रक्षा करने लगे ।

प्रातः पुनर्युयुधिरे कुरुपाण्डवपुङ्गवाः ॥ १४१ ॥
अर्जुनोऽक्षौहिणीः सप्त हत्वा सूर्येऽस्तमेष्यति ।
प्रवेक्ष्यन्नग्निमालोक्य सैन्धवं न्यवधीत् क्षणात् ॥ १४२ ॥

अन्वय—प्रातः पुनः कुरुपाण्डवपुङ्गवाः युयुधिरे अर्जुनः सप्त अक्षौहिणीः हत्वा । सूर्ये अस्तम् एष्यति अग्निं प्रवेक्ष्यन्, सैन्धवं आलोक्य क्षणात् न्यवधीत् ।

शब्दार्थ—प्रातः = प्रभाते, पुनः = भूयः, कुरुपाण्डवपुङ्गवाः = दुर्योधन-युधिष्ठिरादयः, युयुधिरे = अयुद्ध्यन् । अर्जुनः=धनञ्जयः, सप्त

अक्षौहिणीः सेनाः=नियतविशेषसंख्याकाः सप्त सेनाः (यस्यां सेनायां २१८७० संख्याकाः गजाः, २१८७० संख्याकाः रथाः, ६५६१० संख्याकाः अश्वाः, १०९३५० संख्याकाः पदातयश्च भवन्ति सा अक्षौहिणी सेना उच्यते), हत्वा=मारयित्वा, सूर्ये = दिनकरे, अस्तम् = अस्ताचलम्, एष्यति = गच्छति, अग्निम्=वह्निम्, प्रवेक्ष्यन्=प्रवेष्टुम् इच्छन्, सैन्धवं=जयद्रथम्, क्षणात्=तत्कालम्, न्यवधीत् = मारयामास।

भावार्थ—प्रातः पुनः कौरव और पाण्डव-वीरों ने युद्ध किया। अर्जुन सात अक्षौहिणी सेनाओं को मारकर सूर्यास्त के समय अग्नि में प्रवेश के लिए तैयार हो गये। किन्तु जयद्रथ को देखकर उन्होंने तत्काल उसका वध कर डाला।

ततो दुर्योधनः क्रुद्धो रात्रावारब्ध सङ्गरम्।
तदा घटोत्कचो भैमिर्द्रोणादीन् साध्वयोधयत्॥ १४३॥

अन्वय—ततः क्रुद्धः दुर्योधनः रात्रौ सङ्गरम् आरब्ध, तदा भैमिः घटोत्कचः द्रोणादीन् साधु अयोधयत्।

शब्दार्थ— ततः = तदनन्तरम्, क्रुद्धः = रुष्टः, दुर्योधनः = सुयोधनः, रात्रौ = निशि, सङ्गरम् = युद्धम्, आरब्ध = प्रारब्धवान्। तदा = तस्मिन् समये, भैमिः = भीमसेनपुत्रः घटोत्कचः, द्रोणादीन् = शत्रुपक्षीयान् सेनापतीन्, साधु = सम्यक्, अयोधयत् = योधयामास।

भावार्थ—अनन्तर क्रुद्ध दुर्योधन ने रात्रि में युद्ध प्रारंभ किया। तब भीमसेन के पुत्र घटोत्कच ने द्रोण आदि सेनापतियों से जमकर युद्ध किया।

नाशयन्तं चमूमेनमशक्यं हन्तुमन्यथा।
मुक्त्वा शक्तिं शक्रदत्तां कर्णः प्राणैर्व्ययूयुजत्॥ १४४॥

अन्वय—कर्णः शक्रदत्तां शक्तिं मुक्त्वा चमूं नाशयन्तम् अन्यथा हन्तुम् अशक्यम् एनं प्राणैः व्ययूयुजत्।

शब्दार्थ--कर्णः = राधेयः, शक्रदत्ताम् = इन्द्रेण समर्पिताम्, शक्तिम् = आयुधविशेषम्, मुक्त्वा=प्रक्षिप्य, चमूम् = अक्षौहिणीसेनाम् नाशयन्तं = विध्वंसयन्तम्, अन्यथा = अन्योपायैः, हन्तुम् = मारयितुम्, अशक्यम् = असाध्यम्, एनं = घटोत्कचम्, प्राणैः=असुभिः, व्ययूयुजत्= वियोजितवान्, मारयामास इत्यर्थः।

भावार्थ—सम्पूर्ण सेना का नाश करनेवाले घटोत्कच का वध अन्य उपायों से असाध्य समझकर कर्ण ने उसके वध के लिए इन्द्र द्वारा प्रदत्त शक्ति का उपयोग किया।

विराटद्रुपदौ हत्वा द्रोणः प्रातर्महद् भयम्।
पाण्डवानां यदा चक्रे तदोवाच युधिष्ठिरः।
कृष्णादिभिः प्रेर्यमाणो द्रोणं हन्तुं छलोक्तये ॥ १४५ ॥

अन्वय—यदा प्रातः द्रोणः विराटद्रुपदौ हत्वा पाण्डवानां महत् भयं चक्रे, तदा कृष्णादिभिः द्रोणं हन्तुं छलोक्तये प्रेर्यमाणः युधिष्ठिरः उवाच।

भावार्थ—यदा = यस्मिन् काले, प्रातः = प्रभाते, द्रोणः = द्रोणाचार्यः, विराटद्रुपदौ = विराटं द्रुपदं च, हत्वा = नाशयित्वा, पाण्डवानां=युधिष्ठिरादीनाम्, महत् = अत्यन्तम्, भयं = भीतिम्, चक्रे = उत्पादयामास, तदा = तस्मिन् काले, कृष्णादिभिः=वासुदेवप्रमुखैः हितचिन्तकैः, द्रोणं = द्रोणाचार्यम्, हन्तुम् = नाशयितुम्, छलोक्तये = कपटवचनार्थम्, प्रेर्यमाणः=नोद्यमानः, युधिष्ठिरः=धर्मात्मजः, उवाच=नगाद।

भावार्थ--जब प्रातःकाल द्रोणाचार्य ने राजा विराट एवं राजा द्रुपद का वध किया, तब पांडव अत्यन्त भयग्रस्त हुए। उस समय कृष्ण आदि हितचिन्तकों ने द्रोणाचार्य के वध के लिए युधिष्ठिर को कपटमय वचन कहने के लिए प्रेरित किया। तदनुसार युधिष्ठिर बोले।

अश्वत्थामाऽमृतेत्युच्चैर्गज इत्यथ लघ्वसौ ॥ १४६ ॥
तन्निशम्य वचो द्रोणस्तं जानन् सत्यवादिनम् ।
न्यस्तायुधो हतो वेगाद् धृष्टद्युम्नेन सङ्गरे ॥ १४७ ॥

अन्वय—असौ अश्वत्थामा अमृत इति उच्चैः अथ गजः इति लघु [उवाच] । द्रोणः तत् वचः निशम्य तं सत्यवादिनं जानन् न्यस्तायुधः [संजातः सः], सङ्गरे धृष्टद्युम्नेन सङ्गरे वेगात् हतः ।

शब्दार्थ— असौ = युधिष्ठिरः, अश्वत्थामा = एतन्नामकः द्रोणाचार्यपुत्रः, अमृत=मृतः, इति=एवम् , उच्चैः=उन्नत- स्वरेण, अथ = अनन्तरं, गजः = हस्ती, इति = इदम् , लघु = मन्दस्वरेण [उवाच] । द्रोणः=द्रोणाचार्यः, तत्=कप टपूर्णम् , वचः=वचनम् , निशम्य = श्रुत्वा, तं = युधिष्ठिरम् , सत्यवादिनम् = सत्यवक्तारम् , जानन् = विन्दन् , न्यस्तायुधः=निःशस्त्रः, [सञ्जातः=अभूत् । अथ सः =द्रोणः], सङ्गरे=युद्धे, धृष्टद्युम्नेन=द्रुपदपुत्रेण, वेगात् = जवात् , हतः = नाशितः ।

भावार्थ—युधिष्ठिर ने जोर से कहा कि 'अश्वत्थामा मारा गया' और बाद में धीरे से कहा कि 'हाथी मारा गया' । द्रोण ने यह सुना और युधिष्ठिर को सत्यवादी समझकर अपने शस्त्र पृथिवी पर धर दिये । तत्काल धृष्टद्युम्न ने युद्ध में उनका बध कर डाला ।

अश्वत्थामाऽथ तच्छ्रुत्वा निहन्तुं सर्वपाण्डवान् ।
नारायणास्त्रं मुमुचे कृष्णेनैतदशाम्यत ॥ १४८ ॥

अन्वय—अथ अश्वत्थामा तत् श्रुत्वा सर्वपाण्डवान् निहन्तुं नारायणास्त्रं मुमुचे; कृष्णेन एतत् अशाम्यत ।

शब्दार्थ—अथ=अनन्तरम् , अश्वत्थामा = द्रोणपुत्रः, तत् = स्वपितृवधम् , श्रुत्वा = आकर्ण्य, सर्वपाण्डवान्=पञ्च पाण्डुपुत्रान् युधिष्ठिरादीन् , निहन्तुं = मारयितुम् , नारायणास्त्रंम्=आयुधविशेषम् ,

मुमुचे = प्रचिक्षेप। कृष्णेन = वासुदेवेन्, एनत् = नारायणस्त्रतम्, अशाम्यत=शाम्यते स्म।

भावार्थ—अश्वत्थामा ने अपने पिता द्रोणाचार्य के वध का समाचार सुनकर सब पाण्डवों को मारने के लिए प्रभावशाली नारायणास्त्र का प्रयोग किया। किन्तु श्रीकृष्ण ने उसे विफल कर दिया।

स निर्विण्णस्ततो व्यासान् नरनारायणावमू।
ज्ञात्वाऽनुशयमत्याक्षीत् तदहर्व्यरमन् मृधम्॥ १४९॥

अन्वय—ततः निर्विण्णः सः व्यासात् अमू नरनारायणौ ज्ञात्वा अनुशयम् अत्याक्षीत्, तदहः मृधं व्यरमत्।

शब्दार्थ—ततः=नारायणास्त्रशमनानन्तरम्, निर्विण्णः=खिन्नः, सः=अश्वत्थामा, व्यासात्=कृष्णद्वैपायनमहर्षेः, अमू=अर्जुन-श्रीकृष्णौ, नर-नारायणौ = नर-नारायणावतारांशेन अवतीर्णौ, ज्ञात्वा = अवबुद्ध्य, अनुशयम्=दीर्घद्वेषम्, अनुतापं वा ('अथाऽनुशयो दीर्घद्वेषाऽनुतापयोः' इत्यमरः), अत्याक्षीत्=अमुञ्चत्। तदहः=तस्मिन् दिने, मृधम्=युद्धम्, ('मृधमास्फन्दनं संख्यंम्' इति युद्धपर्यायेषु अमरः), व्यरमत्= विरमति स्म।

भावार्थ—नारायणास्त्र व्यर्थ होने पर अश्वत्थामा खिन्न हुआ। परन्तु वेदव्यास ने उसे समझाया कि अर्जुन और श्रीकृष्ण साक्षात् भगवान् नर-नारायण के अवतार हैं। यह जानकर उसका दीर्घ द्वेष एवं पश्चात्ताप शान्त हुआ। उस दिन युद्ध नहीं हुआ।

अथ सेनापतिं कर्णं कृत्वा दुर्योधनः पुनः।
युयुधे तत्र भीमेन जघ्ने दुःशासनो बलात्॥ १५०॥

अन्वय—अथ दुर्योधनः पुनः कर्णं सेनापतिं कृत्वा युयुधे, तत्र भीमेन दुःशासनः बलात् जघ्ने।

शब्दार्थ—अथ = अनन्तरम्, दुर्योधनः = सुयोधनः, पुनः = भूयः, कर्णं = राधेयम्, सेनापतिं = सेनानायकम्, कृत्वा = विधाय, युयुधे = युद्धं चकार। तत्र = युद्धे, भीमेन=वृकोदरेण, दुःशासनः=दुर्योधनानुजः, बलात्=हठात्, जघ्ने=हतः।

भावार्थ—पश्चात् दुर्योधन ने कर्ण को सेनापति बनाकर पुनः युद्ध प्रारम्भ किया। उस युद्ध में भीम ने दुःशासन को बलात् मार डाला।

अथ कर्णं सुसंरब्धमर्जुनाद् वै रथार्थिनम्।
शल्यः कर्तुं हतोत्साहमियेष स न चाऽशकत्॥ १५१॥

अन्वय—अथ शल्यः अर्जुनात् सुसंरब्धम् रथार्थिनम् कर्णं हतोत्साहं कर्तुम् इयेष; सः च न अशकत्।

शब्दार्थ—अथ = अनन्तरम्, शल्यः = नकुलादिमातुलः अर्जुनात् = कौन्तेयात्, सुसंरब्धम्=कृतयुद्धारम्भम्, रथार्थिनम्=रथोत्सुकम्, कर्णम्= दुर्योधनसेनापतिम् राधेयम्, हतोत्साहं = निरुत्साहम्, कर्तुं=विहितुम्, इयेष = अवाञ्छत्। च, सः=शल्यः [तथा कर्तुम्], न अशकत् = न समर्थो बभूव।

भावार्थ—अनन्तर कर्ण के सारथी केशल्य ने अर्जुन से युद्ध के लिए उद्यत रथार्थी महारथी कर्ण को निरुत्साहित करना चाहा, परन्तु वह उसमें सफल न हो सका।

योधयन्नर्जुनं कर्णो गुरुशापेन विस्मरन्।
भार्गवास्त्रं भुवा चक्रं ग्रसन्त्याऽभूत् प्रपीडितः॥ १५२॥
तदाऽर्जुनोऽवधीदेनमादित्येऽस्तं प्रयास्यति॥ १५३॥

अन्वय—कर्णः अर्जुनं योधयन् गुरुशापेन भार्गवास्त्रं विस्मरन् चक्रं ग्रसन्त्या भुवा प्रपीडितः अभूत्। तदा आदित्ये अस्तं प्रयास्यति अर्जुनः एनम् अवधीत्।

शब्दार्थ—कर्णः = राधेयः, अर्जुनं=पार्थम्, योधयन्=युद्धं कारयन् गुरुशापेन = परशुरामशापेन, भार्गवास्त्रं = परशुरामप्रदत्तम् अस्त्रम्, विस्मरन्=विस्मृतः सन्, चक्रं = रथचक्रम् ग्रसन्त्या = आक्रमन्त्या, भुवा= पृथिव्या, प्रपीडितः अभूत् = ग्रस्तः अभवत्। तदा = तस्मिन् अवसरे, आदित्ये = सूर्ये, अस्तं प्रयास्यति=अस्ताचलं प्रविशति, अर्जुनः = कौन्तेयः, एनं=कर्णम्, अवधीत्=व्यनाशयत्।

भावार्थ—महारथी कर्ण गुरु परशुराम के शाप से भार्गवास्त्र को भूल गया। अर्जुन से युद्ध करते समय रथ का चक्र जमीन में धँस जाने से वह अत्यन्त दुःखी हुआ। इसी बीच सूर्यास्त का समय देख अर्जुन ने उसका वध किया।

शल्योऽपरेद्युर्धर्मेण हतः सेनापतीभवन्।
नकुलः शकुनिं जघ्ने सहदेवश्च तत्सुतम् ॥ १५४ ॥

अन्वय—अपरेद्युः धर्मेण सेनापतीभवन् शल्यः हतः, नकुलः शकुनिम् जघ्ने, च सहदेवः तत्सुतं [जघ्ने]।

शब्दार्थ—अपरेद्युः=द्वितीयस्मिन् दिने, धर्मेण=युधिष्ठिरेण, सेनापतीभवन्= दुर्योधनेन सेनापतिपदे नियुक्तः, शल्यः=नकुलमातुलः, हतः = नाशितः। नकुलः = चतुर्थपाण्डवः, शकुनिं = दुर्योधनमातुलम्, जघ्ने= हतवान्। च, सहदेवः=पञ्चमपाण्डवः, तत्सुतं=शकुनिसुतम्, [जघ्ने]।

भावार्थ—दूसरे दिन युधिष्ठिर ने कौरवसेनापति शल्य का, नकुल ने शकुनि का और सहदेव ने उसके पुत्र का वध किया।

तदा दुर्योधनो भीतः प्रविश्याऽस्तम्भयत् सरः।
अथ भीमादयो गत्वा निर्भर्त्स्याऽमुं सरःस्थितम्।
बहिर्निर्गमयामासुर्भीमेनास्य रणोऽभवत् ॥ १५५ ॥

अन्वय—तदा दुर्योधनः भीतः सन् सरः प्रविश्य अस्तम्भयत्;

अथ भीमादयः गत्वा सरःस्थितम् अमुं निर्भर्त्स्य बहिः निर्गमयामासुः; भीमेन अस्य रणः अभवत् ।

शब्दार्थ—तदा = तस्मिन् अवसरे, दुर्योधनः = सुयोधनः, भीतः = भयग्रस्तः सन्, सरः = तटाकम्, प्रविश्य = प्रवेशं कृत्वा, अस्तम्भयत्= स्तम्भयति स्म । अथ = अनन्तरम्, भीमादयः = भीमप्रमुखाः पाण्डवाः, गत्वा = प्राप्य, सरःस्थितं = तडागे लीनम्, अमुं =दुर्योधनम्, निर्भर्त्स्य= भर्त्सयित्वा, बहिः = बाह्यप्रदेशे, निर्गमयामासुः = निष्कासयामासुः । भीमेन = वृकोदरेण सह, अस्य = सुयोधनस्य, रणः = युद्धम्, अभवत्= समजायत ।

भावार्थ—उस समय भयग्रस्त दुर्योधन ने तालाब में प्रवेश कर स्तम्भन विद्या से सरोवर का जल स्तम्भित किया । इसके बाद भीम आदि पाण्डवों ने तालाब में छिप बैठे दुर्योधन को धिक्कारा, जिससे वह तालाब से बाहर निकल आया । पश्चात् भीमसेन के साथ उसका युद्ध हुआ ।

भीमोऽस्य गदया भञ्जन्नूरू तं भुव्यपातयत् ।
पदाऽवधीच्छिरस्येनं दुर्वचोभिरभर्त्सयत् ॥ १५६ ॥

अन्वय—भीमः गदया अस्य ऊरू भञ्जन् भुवि तम् अपातयत्, शिरसि पदा अवधीत्, दुर्वचोभिः अभर्त्सयत् ।

शब्दार्थ—भीमः = वृकोदरः, गदया = आयुधविशेषेण, ऊरू=जङ्घे, भञ्जन्=खण्डयन्, भुवि = पृथिव्याम्, तं=दुर्योधनम्, अपातयत् = पातयामास । शिरसि = मस्तके, पदा = चरणेन, अवधीत् = अताडयत् । दुर्वचोभिः=दुर्वचनैः, अभर्त्सयत्=अतर्जयत् ।

भावार्थ—भीम ने गदा से दुर्योधन के ऊरू-युगल का भंग किया और उसे पृथिवी पर गिरा दिया । उसके सिर पर लात मारी और गालियों से उसकी भर्त्सना की ।

तथा तुदन्तं भीमं तु वारयित्वा युधिष्ठिरः ।
दैवं विनिन्दन् स्वैर्वाक्यैर्दुर्योधनमसान्त्वयत् ॥ १५७ ॥
कृतकृत्याः सुताः पाण्डोः शिविरं प्राप्य हर्षिताः ॥ १५८ ॥

अन्वय—युधिष्ठिरः तु तथा तुदन्तं भीमं वारयित्वा स्वैः वाक्यैः दैवं विनिन्दन् दुर्योधनम् असान्त्वयत् ; कृतकृत्याः पाण्डोः सुताः शिविरं प्राप्य हर्षिताः ।

शब्दार्थ—युधिष्ठिरः तु = धर्मराजः तु, तथा = तेन प्रकारेण, तुदन्तम् = क्लेशयन्तम्, भीमं = वृकोदरम्, वारयित्वा = निरुद्ध्य, स्वैः = निजैः, वाक्यैः = वचनैः, दैवं = भाग्यम्, विनिन्दन् = भर्त्सयन् दुर्योधनं = सुयोधनम्, असान्त्वयत् = सान्त्वयति स्म । कृतकृत्याः = सफलाः, पाण्डोः सुताः = पाण्डुपुत्राः शिविरं = निवेशम्, प्राप्य=आगत्य हर्षिताः=आनन्दिताः अभवन् इति शेषः ।

भावार्थ—धर्मराज युधिष्ठिर ने भीम को दुर्योधन को पीटने से रोका और अपने वचनों से भाग्य को कोसते हुए दुर्योधन को सांत्वना दी । फिर पाण्डव कृतकृत्य होकर अपने शिबिर वापस आये और आनन्द करने लगे ।

निदद्रुरथ हार्दिक्यकृपद्रोणात्मजा ययुः ।
दुर्योधनस्य श्वसतः समीपे तमसान्त्वयन् ॥ १५९ ॥

अन्वय—[पाण्डोः सुताः] निदद्रुः, अथ हार्दिक्यकृपद्रोणात्मजाः श्वसतः दुर्योधनस्य समीपे ययुः, [च] तम् असान्त्वयन् ।

शब्दार्थ—[पाण्डोः सुताः = युधिष्ठिरादयः पाण्डवाः] निदद्रुः = अस्वपन् । अथ = अनन्तरम्, हार्दिक्यकृपद्रोणात्मजाः = हार्दिक्यः, कृपाचार्यः, अश्वत्थामा च, श्वसतः = जीवतः, दुर्योधनस्य = सुयोधनस्य, समीपे = निकटे, ययुः = प्रापुः । तं=दुर्योधनम्, असान्त्वयन् = समाश्वासयन् ।

भावार्थ—पाण्डव हर्षपूर्वक सोये। अनन्तर हार्दिक्य कृपाचार्य और अश्वत्थामा अन्तिम श्वास ले रहे दुर्योधन के पास आये और उसे सान्त्वना दी।

प्रतिजज्ञे तदा द्रौणिर्धृष्टद्युम्नादिपातनम्।
रात्रौ निर्गत्य सुप्तान् तानुत्थाप्य न्यवधीच्छरैः॥ १६०॥

अन्वय—तदा द्रौणिः धृष्टद्युम्नादिपातनं प्रतिजज्ञे, रात्रौ निर्गत्य सुप्तान् तान् उत्थाप्य शरैः न्यवधीत्।

शब्दार्थ—तदा=तस्मिन्, समये, द्रौणिः=अश्वत्थामा, धृष्टद्युम्नादि-पातनम्=धृष्टद्युम्नादीनां वधम्, प्रतिजज्ञे=प्रतिज्ञातवान्। रात्रौ=निशि, निर्गत्य = निष्क्रम्य, सुप्तान् = निद्रितान्, तान् = धृष्टद्युम्नादीन् उत्थाप्य=उत्थापनं कृत्वा, शरैः=बाणैः, न्यवधीत्=अहनत्।

भावार्थ—उस समय अश्वत्थामा ने धृष्टद्युम्न आदि के वध की प्रतिज्ञा की। रात्रि में निकलकर, सोये हुए इन्हें जगाकर बाणों से उनका वध किया।

धृष्टद्युम्नं पाण्डवजान् सैनिकानप्यमर्षितः।
नाशकत् पाण्डवान् हन्तुं धर्षितः कृष्णतेजसा॥ १६१॥

अन्वयः—अमर्षितः [द्रौणिः] धृष्टद्युम्नं पाण्डवजान् सैनिकान् अपि हन्तुम् अशकत्, कृष्णतेजसा धर्षितः पाण्डवान् हन्तुं न [अशकत्]।

शब्दार्थ—अमर्षितः = क्रुद्धः [द्रौणिः = अश्वत्थामा], धृष्टद्युम्नं= द्रुपदपुत्रम्, पाण्डवजान् = पाण्डवपुत्रान्, सैनिकान् अपि=योधान् अपि, हन्तुं=नाशयितुम्, अशकत्=समर्थोऽभूत्। कृष्णतेजसा=वासुदेवप्रतापेन, धर्षितः=अभिभूतः, पाण्डवान्=पाण्डुपुत्रान्, हन्तुं न अशकत् = समर्थो नाभूत्।

भावार्थ—क्रुद्ध अश्वत्थामा धृष्टद्युम्न, पाण्डवपुत्रों और पाण्डवों के

सैनिकों को मारने में वह समर्थ हुआ। परन्तु कृष्णतेज से पराभूत हो वह पाण्डवों को मारने में समर्थ नहीं हुआ।

विलपन्त्यास्ततः प्रातः कृष्णाया भ्रातरं सुतान्।
आश्वासनाय भीमाद्या ययुर्द्रौणिवधैषिणः॥ १६२॥

अन्वय—ततः प्रातः भ्रातरं [च] सुतान् [प्रति] विलपन्त्याः कृष्णायाः आश्वासनाय भीमाद्याः द्रौणिवधैषिणः [सन्तः] ययुः।

शब्दार्थ—ततः = अनन्तरम्, प्रातः = प्रभाते, भ्रातरं = धृष्टद्युम्नम्, च, सुतान्=निजपुत्रान् [प्रति], विलपन्त्याः=आक्रोशं कुर्वन्त्याः, कृष्णायाः= द्रौपद्याः, आश्वासनाय = सान्त्वनाय, भीमाद्याः = भीमप्रमुखाः पाण्डवाः, द्रौणिवधैषिणः [सन्तः]=अश्वत्थाम्नः मारणाय इच्छुकाः सन्तः, ययुः=अजग्मुः।

भावार्थ—भाई धृष्टद्युम्न और पुत्रों के लिए विलाप करनेवाली द्रौपदी को आश्वस्त करने के लिए भीम आदि पाण्डव अश्वत्थामा के वध की इच्छा से चल पड़े।

ततोऽश्वत्थाममुक्तस्य शान्तयेऽस्त्रस्य फाल्गुनः।
ऐषीकस्य ब्रह्मशिरोऽमुचद् भीमः शिरः स्थितम्।
मणिं जहार सहजमतुष्यत् तेन पार्षती॥ १६३॥

अन्वय—ततः फाल्गुनः अश्वत्थाममुक्तस्य ऐषीकस्य अस्त्रस्य शान्तये ब्रह्मशिरः अमुचत्।, भीमः शिरः स्थितं मणिं जहार, तेन पार्षती सहजम् अतुष्यत्।

शब्दार्थ—ततः=अनन्तरम्, फाल्गुनः=अर्जुनः, अश्वत्थाममुक्तस्य= अश्वत्थाम्ना प्रक्षिप्तस्य, ऐषीकस्य = विस्फोटकपदार्थमयस्य, अस्त्रस्य= आयुधविशेषस्य, शान्तये=शमनार्थम्, ब्रह्मशिरः = ब्रह्मास्त्रम्, अमुचत् = मुमुचे। भीमः = वृकोदरः, शिरःस्थितम्=अश्वत्थाम्नः मस्तकस्थितम्,

मणिं=रत्नं, जहार=अहरत्। तेन=हेतुना, पार्षती=द्रौपदी, अतुष्यत्=प्रससाद।

भावार्थ—अनन्तर अर्जुन ने अश्वत्थामा द्वारा प्रक्षिप्त, विस्फोटक पदार्थों से युक्त अस्त्र का प्रभाव दूर करने के लिए ब्रह्मास्त्र का प्रयोग किया। भीम ने अश्वत्थामा के मस्तक पर स्थित मणि को निकाल लिया। इससे द्रौपदी अत्यन्त प्रसन्न हुई।

ततो मृतानां सर्वेषां कृत्वा निर्वपणं पृथक्।
तत्पत्नीश्च समाश्वास्य लेभे राज्यं युधिष्ठिरः।
पितामहगुरुभ्रातृघातान्निर्विण्णमानसः ॥ १६४ ॥

अन्वय—ततः पितामहगुरुभ्रातृघातात् निर्विण्णमानसः युधिष्ठिरः सर्वेषां मृतानां पृथक् निर्वपणं कृत्वा च तत्पत्नीः समाश्वास्य राज्यं लेभे।

शब्दार्थ—ततः=पश्चात्, पितामहगुरुभ्रातृघातात्=(पितामहश्च गुरवश्च भ्रातरश्च पितामहगुरुभ्रातरः, तेषां घातः पितामहगुरुभ्रातृघातः, तस्मात्) निजसकलाप्तजनविनाशात्, निर्विण्णमानसः=(निर्विण्णं मानसं यस्य सः) खिन्नान्तःकरणः, युधिष्ठिरः=धर्मराजः, सर्वेषां=सकलानाम्, मृतानां=गतासूनाम्, पृथक्=प्रत्येकशः, निर्वपणं=तर्पणम्, कृत्वा=विधाय, च, तत्पत्नीः=मृतानां दाराश्च, समाश्वास्य=सान्त्वयित्वा, राज्यं=राज्याधिकारम्, लेभे=प्राप।

भावार्थ—अनन्तर पितामह, गुरु, भाई आदि सब आप्तजनों के वध से खिन्न हो, युधिष्ठिर ने सभी मृतात्माओं के लिए तर्पण कर, उनकी विधवा पत्नियों को आश्वस्त किया। अनन्तर वे राज्यसिंहासन पर बैठे।

पितामहात् स शुश्राव धर्मान् कृष्णमते स्थितः।
राजधर्मान् बहुविधानापद्धर्मांश्च पुष्कलान्।
मोक्षधर्मान् दानधर्मान् सेतिहासोपपत्तिकान्॥ १६५ ॥

अन्वय—कृष्णमते स्थितः सः पितामहात् सेतिहासोपपत्तिकान् धर्मान् शुश्राव, बहुविधान् राजधर्मान् [शुश्राव], पुष्कलान् आपद्धर्मान् [शुश्राव], मोक्षधर्मान् च दानधर्मान् [शुश्राव]।

शब्दार्थ—कृष्णमते=कृष्णस्य परामर्शे, स्थितः=वर्तमानः, सः=युधिष्ठिरः, पितामहात्=भीष्मपितामहात्, सेतिहासोपपत्तिकान्=(इतिहासश्च उपपत्तिश्च इतिहासोपपत्ती तौ एव इतिहासोपपत्तिकौ ताभ्यां सहिताः सेतिहासोपपत्तिकाः तान्) पुरावृत्तयुक्तिसम्पन्नान्, धर्मान्=शास्त्रसम्मतान् आचारान्, शुश्राव=अश्रौषीत्; बहुविधान्=नानाप्रकारकान्, राजधर्मान्=नृपतिधर्मान् [शुश्राव]; पुष्कलान्=बहुलान्, आपद्धर्मान्=सङ्कटकालीन धर्मा कर्तव्यानि [शुश्राव]; मोक्षमधर्मान्=कैवल्यप्रतिपादकान् सिद्धान्तान्, दानधर्मान्=त्यागप्रतिपादकमतानि च [शुश्राव]।

भावार्थ—युधिष्ठिर ने भगवान् श्रीकृष्ण की आज्ञा मानकर भीष्म-पितामह से इतिहास और उपपत्ति के साथ अनेक शास्त्रसम्मत आचारों, विविध राजधर्मों, अनेक आपद्धर्मों, मोक्षधर्मों और दानधर्मों का श्रवण किया।

अथाऽऽचार्यवधोत्थैनःक्षालनायाऽऽजहार सः।
अश्वमेधं दिशो जित्वा भ्रातृभिः स्वमनुव्रतैः॥ १६६॥
ततः पुत्रशतापत्तिसन्तप्तो वनमाश्रयत्॥ १६७॥

अन्वय—अथ सः आचार्यवधोत्थैनःक्षालनाय अनुव्रतैः भ्रातृभिः दिशः जित्वा अश्वमेधम् आजहार; ततः पुत्रशतापत्तिसन्ततः स्वं वनम् आश्रयत्।

शब्दार्थ—अथ=अनन्तरम्, सः=युधिष्ठिरः, आचार्यवधोत्थैनःक्षालनाय=(आचार्यस्य वधः आचार्यवधः, तेन उत्थम् आचार्यवधोत्थम्, आचार्यवधोत्थं च तत् एनश्च आचार्यवधोत्थैनः, तस्य क्षालनम्, तस्मै) द्रोणाचार्यवधजन्यपातकक्षालनार्थम्, अनुव्रतैः=नियमानुसारिभिः, भ्रातृभिः=बन्धुभिः, दिशः=आशाः, जित्वा=विजित्य, अश्वमेधम्=

एतन्नामकं यज्ञम्, आजहार = अयजत्। ततः=तदनन्तरम्, पुत्रशतापत्ति-सन्ततः = पुत्रेषु उपरि आगताभिः असंख्यविपत्तिभिः व्याकुलः, वनं = काननम्, आश्रयत् = जगाम।

भावार्थ—अनन्तर युधिष्ठिर ने द्रोणाचार्य के वध से उत्पन्न पातक धोने के लिए नियमशील बंधुओं की सहायता से सभी दिशाओं को जीतकर अश्वमेध यज्ञ किया। अनन्तर वे पुत्रों पर आयी अनेक विपत्तियों से त्रस्त होकर वनवास करने लगे।

पितृव्यमातृः संद्रष्टुं ययावथ युधिष्ठिरः ॥ १६८ ॥
वनं तान् वीक्ष्य तत्रस्थो विदुरं दृष्टवान् मृतम् ॥ १६९ ॥

अन्वय—अथ युधिष्ठिरः पितृव्यमातृः संद्रष्टुं वनं ययौ। तत्रस्थः तान् [मृतान्] वीक्ष्य विदुरं मृतम् दृष्टवान्।

शब्दार्थ—अथ = अनन्तरम्, युधिष्ठिरः=धर्मराजः, पितृव्यमातृः= धृतराष्ट्रगान्धारीकुन्तीः, सन्द्रष्टुम् = अवलोकितुम्, वनं = काननम्, ययौ = जगाम। तत्रस्थः = वनस्थः, तान् = धृतराष्ट्रादीन्, [मृतान्], वीक्ष्य = दृष्ट्वा, विदुरम् च, मृतम् = गतासुम्, दृष्टवान् = ददर्श।

भावार्थ—अनन्तर युधिष्ठिर धृतराष्ट्र, गांधारी और कुन्ती को देखने के लिए वन गये। वहाँ उन्होंने उनको और विदुर को मरा हुआ देखा।

दवाग्निदग्धमाकर्ण्य धृतराष्ट्रं सह स्त्रिया।
कुन्तीं श्रुत्वा तथा दग्धमकरोदौर्ध्वदेहिकम् ॥ १७० ॥

अन्वय—[युधिष्ठिरः] धृष्टराष्ट्रं स्त्रिया सह दवाग्निदग्धम् आकर्ण्य तथा कुन्तीं दग्धां श्रुत्वा और्ध्वदेहिकम् अकरोत्।

शब्दार्थ—[युधिष्ठिरः = धर्मराजः], धृतराष्ट्रं = स्वपितृव्यम्, स्त्रिया = भार्यया गान्धार्या, सह = साकम्, दवाग्निदग्धम् = वनानलेन भस्मीभूतम्, आकर्ण्य = श्रुत्वा, तथा = तेनैव प्रकारेण, कुन्तीं=स्वमातरम्,

दग्धां = भस्मीभूताम्, श्रुत्वा = आकर्ण्य, और्ध्वदेहिकम् = अन्त्येष्टिम्, अकरोत् = चकार।

भावार्थ—युधिष्ठिर ने अपने चाचा धृतराष्ट्र का पत्नी गांधारी के साथ जल जाना सुनकर और अपनी माता कुन्ती का भी उसी प्रकार मरना सुनकर सबकी अन्त्येष्टि-क्रिया की।

पुनर्नगरमागत्य यातेषु कतिपयेषु दिनेषु।
स शुश्रावाऽर्जुनमुखात् प्रभासे यादवक्षयम् ॥ १७१ ॥

अन्वय—सः कतिपयेषु दिनेषु यातेषु [सति] पुनः नगरम् आगत्य अर्जुनमुखात् प्रभासे यादवक्षयं शुश्राव।

शब्दार्थ—सः = युधिष्ठिरः, कतिपयेषु दिनेषु यातेषु = स्वल्पेषु दिवसेषु व्यतीतेषु, पुनः = भूयः, नगरं = पुरम्, आगत्य = प्राप्य, अर्जुनमुखात् = पार्थवदनात्, प्रभासे = तन्नामके तीर्थविशेषे, यादवक्षयम् = यदुवंशनाशम्, शुश्राव = आकर्णयामास।

भावार्थ—अनन्तर युधिष्ठिर नगर लौट आये। कुछ दिन पश्चात् उन्होंने अर्जुन से यादवों का नाश सुना।

परस्परवधात् तेषामसम्भाव्यं कुलक्षयम्।
शृण्वंश्च कृष्णनिर्याणं स्वयं स्वर्गोत्सुकोऽभवत् ॥ १७२ ॥

अन्वय—[सः] परस्परवधात् तेषाम् असम्भाव्यं कुलक्षयं च कृष्णनिर्याणं शृण्वन् स्वयं स्वर्गोत्सुकः अभवत्।

शब्दार्थ—[सः = युधिष्ठिरः], परस्परवधात् = परस्परविनाशात्, तेषां = यादवानाम्, असम्भाव्यम् = अशक्यम्, कुलक्षयम् = वंशनाशम्, च, कृष्णनिर्याणं = वासुदेवप्रयाणं, शृण्वन् = आकर्णयन्, स्वयं स्वर्गोत्सुकः = स्वयं स्वर्गं गन्तुम् इच्छुकः, अभवत् = बभूव।

भावार्थ—युधिष्ठिर एक दूसरे पर आक्रमण करने से यादव-कुल का

असम्भवनीय विनाश और श्रीकृष्ण का महाप्रयाण सुनकर स्वयं स्वर्ग जाने के लिए उत्सुक हुए।

विसृज्य राज्यं पौत्राय सानुजो द्रौपदीयुतः।
आश्वास्य प्रकृतीर्मुञ्चन् प्रययावुत्तरामुखः॥ १७३॥

अन्वय—द्रौपदीयुतः सानुजः सः पौत्राय राज्यं विसृज्य, प्रकृतीः आश्वास्य मुञ्चन् उत्तरामुखः प्रययौ।

शब्दार्थ—द्रौपदीयुतः = कृष्णासमवेतः, सानुजः = भीमार्जुननकुलसहदेवसहितः, सः = युधिष्ठिरः, पौत्राय = परीक्षिताय, राज्यं = शासनाधिकारम्, विसृज्य—समर्प्य, प्रकृतीः = प्रजाः, आश्वास्य = सान्त्वयित्वा, मुञ्चन् = विसृजन्, उत्तरामुखः = उत्तरदिगभिमुखः, प्रययौ = जगाम।

भावार्थ—युधिष्ठिर अपने पौत्र परीक्षित को राज्य समर्पित कर, प्रजा को आश्वासन देकर, सब कुछ छोड़ भीम, अर्जुन, नकुल, सहदेव तथा द्रौपदी के साथ उत्तरदिशा की ओर चल पड़े।

एकः श्वाऽनुययावेनं यान्तं स्वर्गपथं प्रति।
मध्येमार्गमपप्तंश्च सहदेवमुखाः क्रमात्॥ १७४॥

अन्वय— एकः श्वः स्वर्गपथं प्रति यान्तम् एनम् अनुययौ; च सहदेवमुखाः क्रमात् मध्येमार्गम् अपतन्।

शब्दार्थ—एकः, श्वा = सारमेयः, स्वर्गपथं = व्योममार्गम्, प्रतियान्तं = गच्छन्तम्, एनं = युधिष्ठिरम्, अनुययौ = अनुससार। च, सहदेवमुखाः = सहदेवादयः भ्रातरः द्रौपदी च, क्रमात् = क्रमशः, मध्येमार्गम् = पथि, अपप्तन् = अपतन्।

भावार्थ—एक कुत्ते ने स्वर्ग की ओर जाते हुए युधिष्ठिर का अनुसरण किया। अनन्तर सहदेव, भीम, अर्जुन, नकुल और द्रौपदी एक-एककर रास्ते में गिर पड़े।

आक्रोशतस्तान् वीक्ष्यैष वदन् फलमधर्मजम् ।
स्वर्गदूतेनाऽभिदधे त्यक्त्वा श्वानं स्वरैरिति ॥ १७५ ॥

अन्वय—एषः आक्रोशतः तान् वीक्ष्य अधर्मजं फलं वदन् श्वानं त्यक्त्वा स्वः ऐः इति स्वर्गदूतेन अभिदधे ।

शब्दार्थ—एषः = युधिष्ठिरः, आक्रोशतः = विलापं कुर्वतः, तान् = द्रौपदीभीमादीन्, वीक्ष्य = अवलोक्य, अधर्मजम् = पापजनितम्, फलं = परिणामम्, वदन् = कथयन्, श्वानं = सारमेयम्, त्यक्त्वा = विमुच्य, स्वः ऐः = स्वर्गं गच्छ, इति = एवम्, स्वर्गदूतेन = देवदूतेन, अभिदधे = ऊचे ।

भावार्थ—युधिष्ठिर ने मार्ग में गिर पड़े द्रौपदी, भीम आदि को विलाप करते हुए देखकर इसे उनके पापों का फल बतलाया । देवदूत ने उनसे कहा—'आप इस कुत्ते को छोड़कर स्वर्ग आइये' ।

भक्तं नाहं त्यजामीति तमुक्त्वाऽभिदधे पुनः ।
कर्मवैचित्र्यतो लोका विचित्रा हि शरीरिणाम् ॥ १७६ ॥

अन्वय—अहं भक्तं न त्यजामि इति तम् उक्त्वा [युधिष्ठिरः] [तेन] पुनः अभिदधे हि शरीरिणां कर्मवैचित्र्यतः लोकाः विचित्राः ।

शब्दार्थ—'अहं=युधिष्ठिरः, भक्तं=श्रद्धालुं सारमेयम्, न त्यजामि = न विसृजामि' इति, तम्=देवदूतम्, उक्त्वा = कथयित्वा, [युधिष्ठिरः, तेन = स्वर्गदूतेन], पुनः = भूयः, अभिदधे = ऊचे—'हि = यतः, शरीरिणां = देहिनाम्, कर्मवैचित्र्यतः = सदसत्कर्तव्यवैलक्षण्यात्, लोकाः = इहलोक-परलोकाः, विचित्राः = विलक्षणाः भवन्तीति शेषः ।

भावार्थ—युधिष्ठिर ने देवदूत से कहा कि 'मैं अपने भक्त इस कुत्ते को नहीं छोड़ सकता' । इसपर देवदूत बोला : 'प्राणियों के सत्कर्मों असत्कर्मों की विलक्षणता से ही इहलोक अथवा परलोक प्राप्त होते हैं ।

त्वया सह न तेन श्वा प्राप्तुमर्हः शुभां गतिम्।
अथावोचदमुं राजा त्यक्त्वैनं नार्थये सुखम् ॥ १७७ ॥

अन्वय—तेन श्वा त्वया सह शुभां गतिं प्राप्तुम् अर्हः न, अथ राजा अमुम् अवोचत् एनं मुक्त्वा सुखं न अर्थये।

शब्दार्थ—तेन=विचित्र कर्मगत्या, श्वा=सारमेयः, त्वया=धर्मसूनुना, सह=सार्धम्, शुभाम् = कल्याणकारिणीम्, गतिम् = स्थितिम् प्राप्तुम्= लब्धुम्, अर्हः=योग्यः, न=नास्ति। अथ=एतत् श्रवणानन्तरम्, राजा = युधिष्ठिरः, अमुम्=देवदूतम्, अवोचत्=ऊचे–'एतम्=श्वानम्, त्यक्त्वा= विहाय, सुखम्=स्वर्गादिप्राप्तिम्, न=नहि, अर्थये = कामये।'

भावार्थ—उस विचित्र कर्ममति के कारण ही यह कुत्ता तुम्हारे साथ स्वर्ग पाने का अधिकारी नहीं है'। यह सुनकर युधिष्ठिर ने देवदूत से कहा—'इस कुत्ते को छोड़कर मैं स्वर्गादि सुख नहीं चाहता'।

ततः श्वा धर्मरूपेण प्रादुर्भूयाऽब्रवीदमुम्।
परीक्षितोऽसि बहुधा पुत्र धर्मे स्थिरो ह्यसि।
प्राप्नुहि त्वमतः स्वर्गं दुरवापं परैरपि ॥ १७८ ॥

अन्वय—ततः श्वा धर्मरूपेण प्रादुर्भूय अमुम् अब्रवीत् [हे] पुत्र! बहुधा परीक्षितः असि; हि त्वं धर्मे स्थिरः असि; अतः परैः दुरवापम् अपि स्वर्गम् प्राप्नुहि।

शब्दार्थ—ततः = तदनन्तरम्, श्वा = कुक्कुरः, धर्मरूपेण=यमधर्म-स्वरूपेण, प्रादुर्भूय=प्रकटीभूय, अमुम्=युधिष्ठिरम्, अब्रवीत्=कथनाम्बभूव। [हे] पुत्र !=हे सूनो !, [त्वम्] बहुधा = बहुवारम्, परीक्षितः, असि= वर्तसे। हि = यतः [त्वम्], धर्मे = स्वकर्तव्ये, स्थिरः = निष्ठः, असि। अतः = अस्मात् कारणात्, परैः = अन्यैः दुरवापम् = दुष्प्रापम्, अपि, स्वर्गम् = देवलोकम्, प्राप्नुहि=लभस्व।

भावार्थ—इसके बाद वह कुत्ता धर्म के रूप में प्रकट हुआ और युधिष्ठिर से कहने लगा : 'हे पुत्र ! मैंने अनेक बार तुम्हारी परीक्षा ली, लेकिन तुम धर्म से विचलित नहीं हुए। इसलिए अन्यों द्वारा दुर्लभ स्वर्ग तुम प्राप्त करो'।

अथ गत्वेन्द्रलोकं सो वीक्ष्येन्द्रार्धासनस्थितम्।
दुर्योधनं तथाऽन्यांश्च कर्णादीन् मोदमेदुरान्।
चित्रीयमाणः शुश्राव निरयस्थजनारवम्॥ १७९॥

अन्वय—सः इन्द्रलोकं गत्वा, इन्द्रार्धासनस्थितं दुर्योधनं तथा अन्यान् मोदमेदुरान् कर्णादीन् च वीक्ष्य, चित्रीयमाणः निरयस्थजनारवं शुश्राव।

शब्दार्थ—अथ = अनन्तरम्, सः=धर्मसूनुः युधिष्ठिरः, इन्द्रलोकम्=स्वर्गम्, गत्वा=प्राप्य, इन्द्रार्धासनस्थितम्=देवेन्द्रार्धपीठारूढम्, दुर्योधनं=सुयोधनम्, च अन्यान=अपरान्, मोदमेदुरान्=आनन्दनिर्भरान्, कर्णादीन्=कर्णप्रमुखान्, वीक्ष्य = अवलोक्य, चित्रीयमाणः=चित्रीकृत इव, निरयस्थजनारवम्=[निरये स्थिताश्च ते जनाश्च निरयस्थितजनाः, तेषाम् आरवः तम्] नरकस्थितलोकचीत्कारम्, शुश्राव=शृणोति स्म।

भावार्थ—अनन्तर युधिष्ठिर ने स्वर्ग पहुँचकर दुर्योधन को इन्द्र के अर्धासन पर स्थित और कर्ण आदि अन्य लोगों को आनन्द से भरा देखा। पश्चात् उन्होंने नरक में कराहते लोगों की चीत्कार सुनी। यह देख वे आश्चर्यचकित हुए।

दयालुस्तान् द्रष्टुमनाः प्रतिषिद्धोऽप्यसौ सुरैः।
अयासीत् तत्र चाऽपश्यत् स्वजनं यातनार्दितम्॥ १८०॥

अन्वय—सुरैः प्रतिषिद्धः अपि दयालुः असौ तान् द्रष्टुमनाः तत्र अयासीत्, च यातनार्दितं स्वजनम् अपश्यत्।

सुरैः = देवैः, प्रतिषिद्धः = निषिद्धः अपि, दयालुः=दयावान्, असौ= युधिष्ठिरः, तान = नरकव्यथितान् आत्मीयान्, द्रष्टुमनाः=अवलोकनेच्छुः,

तत्र = नरके, अयासीत्=अगमत् । च, [तत्र], यातनार्दितम्=(यातनया अर्दितम्) व्यथया पीडितम् , स्वजनम्=स्वस्य आप्तवर्गम्, अपश्यत् = अवालोकयत् ।

भावार्थ—देवताओं के निषेध करने पर भी दयालु युधिष्ठिर पीडित लोगों को देखने की इच्छा से नरक गये और वहाँ अपने स्वजनों को यातनाओं से कराहते देखा ।

ते तमूचुस्त्वमत्राऽऽस्व क्षणं नः सुखिनः कुरु ।
त्वत्सान्निध्यवशादेव यातना नो न बाधते ॥ १८१ ॥

अन्वय—ते तम् ऊचुः क्षणम् अत्र आस्व, नः सुखिनः कुरु । [यतः] त्वत्सान्निध्यवशात् एव यातना नः न बाधते ।

शब्दार्थ—ते=नरकस्थिताः स्वजनाः, तं=युधिष्ठिरम्, ऊचुः=कथया-म्बभूवुः—'क्षणम् = अल्पकालम्, अत्र = अस्मिन् स्थाने, आस्व = तिष्ठ; नः = अस्मान्, सुखिनः = आनन्दभाजः, कुरु = विधेहि । [यतः] त्वत्सान्निध्यवशात् = तव सान्निध्यात् एव, यातना = व्यथा, नः = अस्मान्, न=नहि, बाधते = पीडयति' ।

भावार्थ—नरकस्थित स्वजनों ने युधिष्ठिर से कहा कि 'क्षणभर आप यहीं ठहरें और हम लोगों को सुखी बनायें, क्योंकि आपके सान्निध्य से हम लोगों को यातनाएँ नहीं होतीं ।

त्वयि याते भवेद् दुःखमस्माकं नरकोद्भवम् ।
श्रुत्वेति स दयाविष्टस्तत्र स्थातुं मनो दधे ॥ १८२ ॥

अन्वय—त्वयि याते अस्माकं नरकोद्भवं दुःखं भवेत् इति श्रुत्वा दयाविष्टः सः तत्र स्थातुं मनः दधे ।

शब्दार्थ—'त्वयि = भवति, याते = गते, अस्माकम्=नरकस्थितानाम्, नरकोद्भवम्=नरकसम्बन्धि, दुखम्=क्लेशः, भवेत्=स्यात्', इति = एवम् श्रुत्वा = आकर्ण्य, दयाविष्टः = करुणायुक्तः, सः = युधिष्ठिरः, तत्र = नरके,

स्थातुं = निवसितुम्, मनः = मानसम् दधे = धारयामास, युधिष्ठिरेण नरके स्थातुं निश्चितमिति भावः।

भावार्थ—उन लोगों ने युधिष्ठिर से कहा कि 'आपके जाने पर हम लोगों को नरक-यातनाएँ होंगी' यह सुनकर दयार्द्र धर्मराज ने वहीं रहने का निश्चय किया।

देवास्तमूचुर्नैवं त्वं कुर्याश्चित्रा नृणां गतिः ॥ १८३ ॥
तान्प्रत्युवाच कौन्तेयो नाहं स्वजनवर्जितम्।
इन्द्रत्वमपि वाञ्छामि दुःखितेषु स्वबन्धुषु ॥ १८४ ॥

अन्वय—देवाः तम् ऊचुः त्वम् एवं न कुर्याः, [यतः] नृणां गतिः चित्रा। कौन्तेयः तान् प्रति उवाच अहं स्वबन्धुषु दुःखितेषु स्वजनवर्जितम् इन्द्रत्वम् अपि न वाञ्छामि।

शब्दार्थ—देवाः=सुराः, तं=युधिष्ठिरम्, ऊचुः=आहुः, त्वं = भवान्, एवम् = अत्रस्थितिम् नहि, कुर्याः = विधेहि। [यतः = यस्मात्कारणात्] नृणां=नराणाम्, गतिः = स्थितिः, चित्रा = विचित्रा अस्ति। कौन्तेयः= युधिष्ठिरः, तान् प्रति = देवान् प्रति, उवाच=उक्तवान् —'अहं=धर्म-सूनुः, स्वबन्धुषु=निजबान्धवेषु, दुःखितेषु पीडितेषु सत्सु, = स्वजनवर्जितम् =आत्मीयविरहितम्, इन्द्रत्वम् = देवराजपदवीम् अपि, न वाञ्छामि=नेच्छामि।

भावार्थ—देवताओं ने युधिष्ठिर से कहा : 'तुम्हें ऐसा नहीं करना चाहिए, क्योंकि मनुष्यों की कर्मगति विचित्र हुआ करती है'। युधिष्ठिर ने उत्तर में देवताओं से कहा कि 'मैं आप्तों के दुःखित रहते उनके बिना इन्द्रत्व भी नहीं चाहता'।

श्रुत्वेति देवाः सन्तुष्टास्तां मायां देवनिर्मिताम्।
युधिष्ठिरपरीक्षार्थमुक्त्वा तान् स्वर्गमानयन् ॥ १८५ ॥

अन्वय—इति श्रुत्वा सन्तुष्टाः देवाः युधिष्ठिरपरीक्षार्थं देवनिर्मितां तां मायाम् उक्त्वा तान् स्वर्गम् आनयन्।

शब्दार्थ—इति = एवम्, श्रुत्वा = आकर्ण्य, सन्तुष्टाः=प्रसन्नाः, देवाः=सुराः, युधिष्ठिरपरीक्षार्थम् = युधिष्ठिरं परीक्षितुम्, देवनिर्मितां = सुरैः विनिर्मिताम्, तां मायाम् = कपटरचनाम्, उक्त्वा=कथयित्वा, तान् =नरकपीडितान्, स्वर्गम्=देवलोकम्, आनयन् =प्रापयन्।

भावार्थ—यह सुनकर सन्तुष्ट देवताओं ने युधिष्ठिर की परीक्षा के लिए यह देवनिर्मित माया थी, ऐसा कहकर नरकपीडित लोगों को स्वर्ग में पहुँचा दिया।

ततः परिवृतो मित्रैरनुजैरनुजीविभिः।
भार्यया सह कौन्तेयो भुङ्क्ते स्म सुखमुत्तमम्।
आनृशंस्यादिभिर्धर्मैः प्राप्तमाकल्पमक्षयम् ॥ १८६ ॥

अन्वय—ततः मित्रैः अनुजैः अनुजीविभिः परिवृतः कौन्तेयः भार्यया सह आनृशंस्यादिभिः धर्मैः प्राप्तम् अक्षयं सुखम् आकल्पं भुङ्क्ते स्म।

शब्दार्थ—ततः = तदनन्तरम्, मित्रैः = सुहृद्भिः, अनुजैः=कनिष्ठ-बन्धुभिः, अनुजीविभिः = सेवकैः च, परिवृतः= वेष्टितः, कौन्तेयः= युधिष्ठिरः, भार्यया=द्रौपद्या, सह=साकम्, आनृशंस्यादिभिः=दया-प्रभृतिभिः, धर्मैः=सत्कर्मभिः, प्राप्तम्=लब्धम्, अक्षयं=शाश्वतम्, सुखम् =आनन्दम्, आकल्पम् = कल्पपर्यन्तम्, भुङ्क्ते स्म = अन्वभवत्।

भावार्थ—अनन्तर मित्र, बन्धु, सेवक आदि से परिवृत युधिष्ठिर ने द्रौपदी के साथ दया आदि गुणों से प्राप्त शाश्वत सुख का कल्पान्ततक उपभोग किया।

चन्द्राब्धि व्योमभूवर्षे पूर्णिमायां शुचेर्भृगौ।
गुरुपाद प्रसादेन सम्पूर्णा बालतोषिणी॥

———

संस्कृतानुवादनिबन्धादर्श

(प्रथमा परीक्षा के पाठ्यक्रम में निर्धारित)

लेखक—पूर्णानन्द गौड़

उत्तर प्रदेश, बिहार, पंजाब आदि प्रदेशों की संस्कृत तथा अंग्रेजी परीक्षाओं में 'संस्कृत में अनुवाद एवं निबन्ध' को प्रमुख स्थान दिया गया है। अभ्यास एवं समझ की कमी के कारण छात्र अनुवाद और निबन्ध लिखने में असफल से रहते हैं। इसी बात को ध्यान में रख कर गौड़जी ने उक्त पुस्तक का निर्माण कर छात्रों की कठिनाई दूर कर दी है। पुस्तक में अनुवाद बनाने के नियम सहायतार्थ शब्द और आदर्श वाक्यों को देकर पुस्तक की उपादेयता अत्यन्त बढ़ा दी है। अभ्यासार्थ सरल एवं छोटे छोटे निबन्धों ने पुस्तक में चार चाँद लगा दिये हैं। सुन्दर ग्लेज कागज मनोहर छपाई आकर्षक आवरण होते हुए भी मूल्य १.५० मात्र।

रूपतरङ्गिणी

ले० पं० श्री चन्द्रधर शुक्ल, व्याकरणाचार्य

इस पुस्तक में वाराणसेय सं० विश्वविद्यालय की नवीन नियमावली के अनुसार प्रथमा परीक्षा में निर्धारित सभी शब्दों तथा धातुओं के रूपों का संग्रह कर दिया गया है। पुस्तक प्रथमा परीक्षा के छात्रों के लिये अत्यन्त उपयोगी है। मूल्य ०.५०

ISBN 81-208-2563-2

प्राप्तिस्थान—

मोतीलाल बनारसीदास

पो० ब० ७५, नेपालीखपरा, वाराणसी।